शनिवार,
२५ अप्रैल, १९५३

संसदीय वाद विवाद

1st

लोक सभा

तीसरा सत्र

शासकीय वृत्तान्त

(हिन्दी संस्करण)

Preservation Unit
13.3.92
Fumigated
Parliament Library

भाग २—प्रश्न और उत्तर से पृथक् कार्यवाही

संसदीय वाद विवाद

(भाग २—प्रश्न और उत्तर से इतर कार्यवाही)

शासकीय वृत्तान्त

लोक सभा

शनिवार, २५ अप्रैल, १९५३

सदन की बैठक सवा आठ बजे समवेत हुई।

[**उपाध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

प्रश्न और उत्तर

(प्रश्न पूछे नहीं गये; अतः भाग १ प्रकाशित नहीं किया गया।)

भारतीय आय-कर (संशोधन) विधेयक

वित्त मंत्री (श्री सी० डी० देशमुख): मैं सर्वप्रथम इस साधारण बात को लेना चाहता हूं जो यहां बतलाई गई है कि एक विशद आय कर (संशोधन) विधेयक को प्रस्तुत करने या, आगे बढ़ाने के लिये जान बूझ कर विलम्बकारी प्रपंच को अपनाया जाता है। श्री वी० पी० नायर तथा कई अन्य लोगों ने यह बात कही थी।

तो मैं इतना ईमानदारी से कह सकता हूं कि जहां तक भी सदन में कार्य संचालन का प्रश्न था हम ने उस विशद विधेयक को आगे बढ़ाने का प्रयत्न अवश्य किया, और मैं यह भी बतला दूं कि उस में आय कर जांच आयोग की बहुत सी सिफारिशें भी थीं। श्रीमान्, आपको स्मरण होगा कि यह विधेयक जून १९५१ में पुरःस्थापित किया गया था,

किन्तु अन्तरिम संसद् से इसे बहिष्कृत किया गया और उसके पश्चात् वह समाप्त हुआ। और अब यह आरोप साधारण रूप से केवल आय कर (संशोधन) विधेयक के सिलसिले में लगाया जाता है, अपितु संपदा शुल्क विधेयक के सम्बन्ध में भी ऐसी ही बात कही जाती है, और मेरा विचार है कि साम्यवादी पार्टी के माननीय उपनेता ने मुझे असफलता की चुनौती दी, और यह कहा कि मैं वर्तमान सत्र में सम्पदा शुल्क विधेयक के सभी चरणों को आगे नहीं बढ़ा सका।

यों तो आप सभी को विदित है कि सदन के अपने हाथों में ही यहां का सारा कार्य है, और इसके अपने नियमों के अनुसार चलती भी है, और काम को प्राथमिकता देने के लिये एक कार्य परामर्शदात्री समिति भी कार्य कर रही है। इस सम्पदा शुल्क विधेयक के सम्बन्ध में बहुत सी पार्टियां—कई एक व्यक्तियों और हितों को छोड़ कर—इस बात पर सहमत हैं कि इस को आगे बढ़ाया जाय और पारित किया जाय, और फिर भी इस चालू सत्र में हम इस के लिये पांच दिन से अधिक समय नहीं दे सके हैं। यद्यपि इस में वस्तुतः केवल एक बात का ही अधिक विस्तार होगा, फिर भी मैं यही कहूंगा कि जहां तक मेरा प्रश्न है मैं अब भी अगस्त के बीच तक बैठने को तैयार हूं यदि सम्पदा शुल्क विधेयक के पारित होने की कोई भी सम्भावना हो; किन्तु मैं यह काम अकेले में नहीं कर सकता। मुझे यह काम करने में बहुत ही प्रसन्नता होगी,

[श्री सी० डी० देशमुख]

किन्तु मुझे शेष सदन का समर्थन प्राप्त होना चाहिये, और मेरा विश्वास है कि सभी पार्टियों के सदस्यों या प्रतिनिधियों ने सनिश्चय इस बात की घोषणा की है कि वे १५ मई के बाद सत्र में नहीं बैठेंगे। अतः मेरे विचार में, मैं इस विशद आयकर (संशोधन) विधेयक के सम्बन्ध में अपने ऊपर की किसी भी प्रकार की दुर्भावना पैदा होने की सफाई दे चुका हूं।

अब, यह वर्तमान विधेयक, जिसमें मुख्य रूप से इस प्रकार के उपबन्ध हैं जो विवादग्रस्त नहीं, सदन के समक्ष ग्यारह महीनों से है, और यद्यपि प्रवर समिति ने पांच महीने से अधिक समय पहले इस की रिपोर्ट भी दी, फिर भी इसे अब उठाया जा सका है।

अब इस के बाद मैं आय कर के सहायक आयुक्तों का केन्द्रीय राजस्व परिषद् के अधिकार से अपीलीय न्यायाधिकरण को स्थानान्तरण का अतिविवादग्रस्त प्रश्न उठाना चाहता हूं। श्री एन० सी० चटर्जी तथा पंडित ठाकुरदास भार्गव ने जिन में से यहां कोई भी नहीं है, यह बात उठाई थी। इस मामले में निधि-पाण्डित्य का बहुत बड़ा प्रदर्शन हुआ, किन्तु मैं सम्मानपूर्वक यह कहना चाहता हूं कि यह बात भी ग़लत समझी गई थी। वास्तव में हम कार्यपालिका को न्यायपालिका से पृथक् करने के विशद सिद्धान्त पर बातचीत नहीं कर रहे हैं। जहां तक आय कर अपीलों को निपटाने का प्रश्न है, वास्तविक स्तर यह है जहां अपील में तथ्य तथा विधि के प्रश्न न्यायिक न्यायाधिकरण के पास जाते हैं, अतः यह अन्यायपूर्वक बात होगी कि यह सिद्धान्त अपनाया नहीं गया है। इसके बाद यह प्रश्न पैदा होता है कि क्यों हमारी राय में एक निम्न स्तर पर पूर्ण न्यायिक अपीलीय अधिकरण की व्यवस्था करना सम्भव नहीं है अब, इसके कारण इस प्रकार हैं।

सर्वप्रथम बात यह है कि आई० टी० ओ० प्रशासनीय राजस्व पदाधिकारी होते हैं और अपीलीय सहायक आयुक्तों की अपीलें प्रशासन सम्बन्धी पुनर्विलोकन होते हैं। अब मैं अपने इस वक्तव्य के लिये कई एक प्रसिद्ध विद्वानों के उद्धरण देना चाहता हूं। मुझे सर्वप्रथम इस बात का खेद है कि माननीय सदस्य उपस्थित नहीं हैं अतः मेरी ये सब बातें व्यर्थ होंगी। भगत हलवाई (आई० टी० सी० पृष्ठ ५१) के सम्बन्ध में सर सेसिल वाल्श तथा इक़बाल अहमद के निर्णय में इस सिद्धान्त का समर्थन किया गया है, और यदि आप आज्ञा दें तो मैं उसे उद्धृत करूंगा। इसमें बताया गया है कि : "संलापोचित भाषा में इन्हें न्यायिक कार्यवाही कहा जा सकता है।" मैं उक्त निर्णय से पढ़ कर सुना रहा हूं—"जनता तथा करदाता के बीच निर्णायक के रूप में उन सभी बातों पर जिन्हें विचार में लाया जा सकता, है, ध्यान देते हुए, आय कर पदाधिकारियों को न्यायिक रूप से इस बात का निश्चय करना पड़ता है किन्तु जहां तक इस शब्द का वैज्ञानिक अर्थ लिया जाये, इन्हें न्यायिक कार्यवाही नहीं कहा जा सकता; और इन्हें किसी अधिक ऊंचे न्यायाधिकरण के समक्ष अपील करने के लिये इस प्रकार के प्रश्न बताने पड़ते हैं कि क्या करारोपण करने वाले ने साक्ष्य के विरुद्ध कार्य करने का निश्चय किया है या एक ऐसे तथ्य का निश्चय किया है जिसका कोई भी साक्ष्य नहीं, या उस साक्ष्य की कोई भी परवाह नहीं थी जिसपर उसे विचार करना चाहिए था। इस प्रकार की विवादास्पद बात पर क्षणमात्र के लिये ध्यान देने से यह न्यायालय उन करदाताओं के लिये एक अपीलीय न्यायालय बनेगा जो पहले के निश्चय से असन्तुष्ट रहे हों।" इसमें यह भी बताया गया है : "हमारे या आयुक्त के समक्ष राज्यकीय मामलों के

लिये आये हुये आवेदन पत्रों की बौछाड़ होनी चाहिये।" वे यह भी कहते हैं :—"इस में विधि की कोई भी बात पैदा नहीं होती, अतः एव हमें सूचना जारी नहीं करनी चाहिये।" यह तो एक अधिकृत स्रोत रहा।

इसके अतिरिक्त, अन्तर्देशीय राजस्व के आयुक्तों में सर्वश्रेष्ठ कार्य प्रबन्धक लार्ड हैनवर्थ ने स्नीथ (डी० जी० एम० के लिये बनाई गई समिति) में कुछ विचार प्रकट किये हैं। (टी० सी० १७ ; पृष्ठ १६१)

चुनाचे लार्ड हैनवर्थ ने लार्ड हर्शल के पहले के विचार प्रकट किये हैं, और कहा है:—"यह सच है कि एक अनुज्ञप्ति (लाइ-सेंस) के नवीकरण के लिये न्यायाधिपतियों ने विचार करना अस्वीकार किया और उनका निर्णय इसी से सम्बन्धित था। वे (लार्ड हर्शल) कहते हैं : "सच तो यह है कि इस देश की पार्टियों में कोई भी झगड़ा या विवाद नहीं है, और इस तरह उन में से किसी एक के पक्ष या विपक्ष में कुछ भी निर्णय नहीं दिया जा सकता जब तक उसे अन्य पार्टी न समझा जाय।" इस मामले में राज्य से अभिप्रेत है तथा कथित अन्य पार्टी जिस पर एक साथ न्यायाधीश तथा अभिभोक्ता होने का अपराध लगाया गया है। किन्तु दोनों में यह अन्तर है कि जहां तक राज्य का प्रश्न है, आवश्यक रूप से उसका प्रतिनिधित्व किसी प्रशासकीय संस्था द्वारा कराना पड़ता है। यों तो यह नहीं कहा जा सकता कि इस में दो पार्टियों का झगड़ा है। मुझे दुःख है कि अपनी टिप्पणी सुनाने के लिये मैं ने पूरा उद्धरण नहीं सुनाया किन्तु मैं पुनः उद्धरण जारी रखूंगा, और अब इस उद्धरण का अति महत्वपूर्ण भाग आता है : "आरोपण से संगत सभी तथ्यों को न्यायालय के समक्ष रखने के अतिरिक्त उस जांच करने वाले में और कोई भी रुचि नहीं है। जब तक वह जाच कर्ता उस एक व्यक्ति को, जिसे कर देना हो छोड़ कर अन्य सभी करदाताओं का प्रतिनिधि नहीं समझा जाता तब तक यह निश्चय उसके पक्ष में नहीं जा सकता।" मेरा विचार है कि यह एक दृढ़ सिद्धान्त है और इसके साथ साथ एक सारभूत सिद्धान्त भी है।

मैं यह बतलाना चाहता हूं कि बहुत से अन्य देशों में एक ही प्रकार का व्यवहार है क्योंकि इस से सम्बन्धित प्रक्रिया एक ही सिद्धान्त से आती है, और पहली अपील सीधे ही राजस्व पदाधिकारियों के पास जाती है। मेरे पास उन पदाधिकारियों की एक लम्बी सूची है, जिनके पास अपीलें भेजी जाती हैं किन्तु मैं सारा विवरण पढ़ कर सदन का समय नष्ट नहीं करना चाहता। यह तो एक लम्बी सूची है जिसमें आस्ट्रेलिया, क्यूबा, कैनाडा, फ्रांस, लक्सम्बर्ग, पाकिस्तान, दक्षिणी अफ्रीका, टर्की, आदि देशों सहित सोलह देश हैं और जिन पदाधिकारियों के पास पहली अपील जाती है, उनके नाम इस प्रकार हैं:—आस्ट्रेलिया में—करारोपण आयुक्त; क्यूबा में वित्त मंत्रालय; कैनाडा में राष्ट्रीय राजस्व मंत्रालय; फ्रांस में आर्थिक प्रशासन; इस-राईल में वित्त मंत्री; पाकिस्तान —इसका मैं उल्लेख नहीं करूंगा, क्योंकि इन का कानून पुराने भारतीय कानून पर आधारित है; और दक्षिणी अफ्रीका—मैं इस का भी उल्लेख नहीं करूंगा। आप कहीं भी देख लें, देखना यही है कि सभी जगह एक सा व्यवहार है एक या दो अपवाद हो सकते हैं। कभी-कभी इन्हें वित्त मंत्री द्वारा नियुक्त किया जाता है। कभी कभी संसद् द्वारा स्वीकृत कार्य कर्त्ता सूचियां हुआ करती हैं—जिस प्रकार ब्रिटेन में कानूनी बातों के जानने वाले साधा-रण व्यक्ति हुआ करते हैं। प्रश्न यह है कि यदि आप विविध देशों को देखें, तो शायद ही आपको कोई ऐसा देश मिलेगा जिसमें पहली

[श्री सी० डी० देशमुख]

अपील न्यायिक पदाधिकारियों के पास इस प्रकार जाती हो।

लोक वित्त म सुप्रसिद्ध विद्वानों द्वारा इस व्यवहार का समर्थन किया जाता है, और लोक वित्त पर हार्ले लीस्ट लुत्ज़ द्वारा लिखी गई एक सुप्रसिद्ध पुस्तक से मैं पढ़ के सुना दूंगा। इस विद्वान् लेखक ने बहुत से अन्य देशों के विद्वानों की अपेक्षा करारोपण सिद्धान्त का गहन अध्ययन किया है। अब देखिये कि इसकी पुस्तक में क्या लिखा है :—

"पुनर्विलोकन प्रक्रिया स्थापित करने में दो प्रणालियों से काम लिया गया है। इन में से पहली प्रशासनीय या अर्द्धन्यायिक है। दूसरी न्यायिक है—यानी राज्य कर आयोग जैसे उच्चतर प्रशासकीय पदाधिकारी के पास अथवा अदालत में वह अपील जा सकती है अपील सुनते समय आयोग अर्द्ध न्यायिक रूप में काम तो करता है किन्तु वह तरीके तथ्य मालूम करने के लिये न्यायालयों द्वारा चलाई जाने वाली कार्य प्रणालियों तक ही सीमित नहीं हैं। और वह बहुत ही महत्वपूर्ण है। "यदि यह सम्पत्ति के मूल्यों का प्रश्न है—जैसे कि....." तो मैं यह बतला दूंगा कि हम ने सम्पदा शुल्क विधेयक पर विवाद करते समय इस बात पर विचार किया था —

" ..... उक्त आयोग अन्तर्ग्रस्त स्थान में जाकर तथ्यों को स्वयं जांच कर अन्य असेसरों (उपासीनों) अथवा संचित आंकड़ों की सहायता लेकर किसी निर्णय पर पहुंच सकता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि करारोपण की तथ्यात्मक बातों का प्रशासकीय पुनर्विलोकन न्यायिक पुनर्विलोकन से श्रेष्ठ माना जाना चाहिये, यद्यपि कानूनी बातों के निश्चय के लिये हमें न्यायालय से सहायता, लेनी पड़े....."

जिस प्रकार वे हमारे कानून के अधीन किया करते हैं—

".....कर प्रबन्धक को निरन्तर रूप से करारोपण की ठोस बातों का पता दिलाया जाता है, और वह तथ्यों का निश्चय करने के लिये उन न्यायाधीशों की अपेक्षा जो इस प्रकार के मामलों का निर्णय देते हैं अधिक योग्यता प्राप्त होता है। और भी यह बात है कि न्यायिक पुनर्विलोकन की अपेक्षा प्रशासकीय पुनर्विलोकन में कम उपचार की बातें और इसीलिये कम खर्चीलापन है।"

और व्यय के इस प्रश्न का प्रभाव कुल स्वीकृत सहायता पर भी पड़ता है जिसका किसी ने ग़लत आगणन किया था। इस में हमारे दावे के अनुसार २०० रुपये या ७५० रुपये प्रति व्यक्ति की बात हो तो कदाचित इसका खर्चा बढ़ता ही जायेगा यदि लोगों को और भी अधिक विशद न्यायिक प्रक्रिया से गुज़रना पड़े। उद्धरण को जारी रखते हुये—"कोई भी मनुष्य व्यक्तिगत रूप से अपना केस अदालत में पेश नहीं कर सकता, बल्कि उसे अधिकृत वकीलों द्वारा ही केस को प्रस्तुत करना चाहिये।" मैं यह भी बतला दूं कि हमारे आय कर कानून प्रशासन में, हम निर्बाध रूप से वकीलों को प्रस्तुत होने की आज्ञा देते हैं जब भी आसामियों को उनकी आवश्यकता पड़ती है—पुनः उद्धरण को जारी रखते हुए—"सुजाग्रत कर आयोग....." यह बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि हम भी इसी श्रेणी के हैं—

"सुजाग्रत कर आयोगों से अनौपचारिक अपील प्रक्रिया को बढ़ावा मिलता है ..."

हम न केवल बढ़ावा देते हैं, अपितु इसके लिये लड़ते हैं—

"..... और जायदाद के मालिकों को व्यक्तिगत रूप से हाज़िर होने की आज्ञा

देते हैं, जिससे पुनर्विलोकन कार्यवाही का खर्चा कम हो जाता है। किसी भी पुनर्विलोकन प्रक्रिया में 'उचित प्रक्रिया' की मूल आवश्यकता ——अर्थात् रुचि लेने वाली पार्टियों को नोटिस तथा सुनाई के लिये मौका——को पूरा किया जाना चाहिये।" मेरा विचार है कि मैंने इस बात की सफाई पेश की है कि क्यों उस प्रशासक सम्बन्धी कठिनाई के अतिरिक्त, जिसका मैंने उल्लेख नहीं किया, सहायक अपीलीय आयुक्त आयोग के अधीन काम करते रहें।

इस सिलसिले में मैं श्री टी० एन० सिंह द्वारा बताई गई बात बहुत ही सराहनीय समझता हूं। उनका कहना ठीक है कि इसके बाद अब इस बात की मांग होगी कि प्रारम्भिक पररोपण को लिया जाय——और यदि हम पहली बात मान लें तो हमें आई० टी० ओ० को एक और करदाता को दूसरी पार्टी बना कर अदालत में जाना पड़ेगा। आप स्वयं ही अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि ऐसी प्रारस्थिति में करारोपणों को पूरा करने में कितनी देर लगेगी। मैं बतला चुका हूं कि तथ्य का प्रश्न अपील के रूप में जो अपीलीय न्यायाधिकरण के रूप में किसी स्वतन्त्र बोर्ड के समक्ष लिया जा सकता है और विधि का प्रश्न तो सीधे सर्वोच्च न्यायालय तक जा सकता है। मैं कई आंकड़े भी देना चाहूंगा। इन से यह स्पष्ट होता है कि अपीलीय सहायक आयुक्तों द्वारा निपटाई गई अपीलों में केवल १३ प्रतिशत न्यायाधिकरण तक जाती हैं, जिसका यह अभिप्राय है कि ८७ प्रतिशत पुनर्वादियों को अपीलीय सहायक आयोग के निर्णय से कोई भी शिकायत नहीं है। और न्यायाधिकरण के समक्ष जो १३ प्रतिशत अपीलें गईं उन में से केवल पांचवां भाग सफल रहा; और दो पंचाई असफल रहीं तथा शेष दो पंचाई अंशतः सफल रहीं। १९५१–५२ में अपीलीय सहायक आयुक्त द्वारा दी गई कर तथा अर्थदण्ड की धनराशि ४,७८,००,००० रुपये थे। अतः हमारी समझ में नहीं आता कि किस तरह प्रति निर्धार्य २०० रुपये की कटौती का हिसाब लगाया गया है। ३३,४५० अपीलों में इस राशि की कटौती की गई थी, जिसका यह अभिप्राय है कि प्रति निर्धार्य १,४०० रुपये से अधिक की कटौती हुई, और मुझे दुःख है कि यथापूर्व मैंने तथ्यों का ग़लत अन्दाज़ा लगाया फाइल की गई अपीलों की कुल संख्या के आधार पर औसत ७०० रुपये का होगा——यही आंकड़े मेरे दिमाग़ में भी थे। मैंने करारोपण की औसत राशि केवल ३,५०० रुपये मान ली थी। इन उद्धृत किये गये आंकड़ों के प्रकाश में, मैं इस बात का दावा करता हूं कि काफ़ी कटौती हुई है।

अब, जैसा कि लार्ड हैरवर्थ के उद्धरण में बतलाया गया है, कि यदि अपीलीय सहायक आयुक्त विभाग के अधीनस्थ नहीं हों तो साक्ष्य, आदि प्रस्तुत करने से सम्बन्धित व्यवहार तथा प्रमाण-भार आवश्यक रूप से और भी अधिक कड़ा होगा। अन्त में यह प्रशासकीय कठिनाई भी है कि कर्मचारी-वर्ग की वर्तमान कमी में, आय कर सहायक आयुक्तों तथा अपीलीय सहायक आयुक्तों की कड़े रूप से पृथक् पदालियों में व्यवस्था करने के लिये पदाधिकारियों की पर्याप्त संख्या उपलब्ध नहीं है। निस्सन्देह, उस तर्क का यह उत्तर है कि "यदि आप अभी उसे नहीं कर लेते तो कृपया उसे सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कीजिये और तब ही आप तीन या चार वर्ष की अवधि में, जैसी भी कर्मचारी-वर्ग की स्थिति हो, इसे पूरा कर सकते हैं।" किन्तु मैं उस प्रकार का उत्तर नहीं देना चाहता क्योंकि मुझे इस बात का पूरा आश्वासन प्राप्त है कि सिद्धान्त के रूप में मैं जिस क्रियाविधि पर ज़ोर दे रहा हूं वह स्वयं निर्धार्य के हित में बिल्कुल ठीक है।

[श्री सी० डी० देशमुख]

तो विवाद में पूछे गये महत्वपूर्ण प्रश्नों में से प्रारम्भ के कुछ एक प्रश्न इस प्रकार निपटा कर, मैं अब विमुक्ति प्रतिबन्ध के अगले प्रश्न को लेता हूं जो धर्मार्थ संस्थाओं द्वारा किये गये व्यवहार से प्राप्त आय के सम्बन्ध में है। माननीय सदस्यों की एक बहुत बड़ी संख्या इस में रुचि रखती थी और पुनः श्री एन० सी० चटर्जी, श्री अविनाशलिंगम् चेटियार तथा कई अन्य वक्ताओं द्वारा गम्भीर बातें भी बताई गईं। एक माननीय सदस्य द्वारा प्रस्थापित संशोधन के अनुसार, इस विषय में उन न्यासों के व्यवहार से प्राप्त आयों, जो समग्र रूप से धार्मिक अथवा धर्मार्थ के अभिप्राय से काम कर रहे हैं, को कर मुक्त किया जायेगा, यद्यपि इस प्रकार के व्यवहार धारा ४ (३)(१क) में बताई गई शर्तों को पूरा नहीं करते हैं। इन शर्तों से उन व्यवहारों का क्षेत्र सीमित हो जाता है जिनकी आय को छूट प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हो। यदि हम इस प्रकार का संशोधन स्वीकार कर लेते तब धार्मिक अथवा धर्मार्थ न्यासों द्वारा चलाये गये व्यवहार को साधारण व्यापारियों द्वारा चलाये गये व्यवहार की अपेक्षा अनुचित लाभ मिलेगा इस बात पर विचार करने के अतिरिक्त भी, मैं इस उपबन्ध ४(३)(१क) के आविष्ट किये जाने के कारणों को और अधिक विस्तार से जानना आवश्यक समझता हूं।

आय कर अधिनियम की धारा ४(३)(१), जिसमें धार्मिक अथवा धर्मार्थ प्रयोजनार्थ न्यास अथवा अन्य विधिनिहित दायित्व में पड़ी सम्पत्ति से प्राप्त आय पर छूट दी गई है, बहुत समय तक संनिधि का एक भाग बन कर रही है। सम्बद्ध विभाग के 'संपत्ति' शब्द का अर्थ विस्तृत रूप में लिया ताकि इस में प्रतिभूतियां और व्यवहार सम्मिलित हो सके। १९३६ की आयकर पूछताछ रिपोर्ट ने जो सिफारिश की है वह ग्रेट ब्रिटेन के कानून के अन्तर्गत स्थिति पर आधारित है, और वह इस प्रकार है :—

"यदि किसी भी कारणवश, कोई सीमा रखने की इच्छा प्रगट की जाय, तो हमारे सुझाव इस प्रकार होंगे—(१) जो भी धार्मिक निजी न्यास जनहित का कार्य नहीं करते उन्हें करमुक्त नहीं किये जायं, और (२) कि धार्मिक या धर्मार्थ न्यास के न्यासधारियों द्वारा चलाया जाने वाला व्यवहार इन शर्तों पर करमुक्त हो—जबकि व्यवहार गतिविधियां अपने में धर्मार्थ का प्रारम्भिक प्रयोजन हो, अथवा जब व्यवहार के सिलसिले में किया जाने वाला काम मुख्य रूप से लाभानुभोगियों द्वारा चलाया जाता हो। **[देखिये धारा २४, यूनाइटेड किंगडम फाईनेन्स एक्ट १९२७]**

सरकार ने यह सिफारिश स्वीकार की और तदनुसार खण्ड (१ क) को धारा ४ (३) में निविष्ट किया गया था, और इसका भाव यह था कि धारा ४(३) (१) सम्पत्ति को समा लेगी जब कि धारा ४(३) (१क) व्यवहार को जतायेगी।

चैरिटेबिल गाडोदिया स्वदेशी स्टोर्स के मामले में न्यायाधिकरण से विभाग के पक्ष में ही प्रश्न का निर्णय दिया और यह प्रगट किया कि नये खण्ड (१क) का वर्तमान खण्ड (१) के साथ के सामीप्य से खण्ड (१) में प्रयुक्त 'संपत्ति' शब्द में से व्यवहार व्यापार की व्यंजना अलग की जानी चाहिये। लाहौर हाईकोर्ट ने तो एक और दृष्टिकोण लिया और निम्नांकित विचार प्रगट किया :

"खण्ड (१क) जिस रूप में भी हमारे समक्ष है, किसी भी स्थिति में खण्ड (क) से किसी भी बात को घटा नहीं सकता न तो उसका अंशलोप कर सकता है इससे बल्कि

अपवादों की सूची में वृद्धि हो जाती है और एक विशेष प्रकार के व्यवहार के लिये ऐसी व्यवस्था हो जाती है, जो विधान मण्डल के विचार में पहले कभी नहीं हुई थी। विधान मण्डल द्वारा निविष्ट नया खण्ड एक ही उपधारा में तब तक अपने पूर्ववर्ती खण्ड से असंगत अथवा उसके विरुद्ध नहीं माना जा सकता, जब तक कि स्पष्ट रूप से वैसी बात उपबन्धित नहीं हुई हो। अतः एक, यदि इस का उचित अनुदर्शन किया जाय तो खण्ड (१क) को केवल ऐसे व्यवहार पर ही लागू माना जा सकता है जो उस के धार्मिक या धर्मार्थ संस्थाओं की ओर से जो किसी न्यास के अधीन नहीं थीं, चलाया हो; और ऐसे व्यवहार पर नहीं जो स्वयं न्यास के अधीन रखा गया था अथवा ऐसी धार्मिक या धर्मार्थ संस्थाओं को ओर से अथवा उन ही के द्वारा चलाया गया था जो न्यास के अधीन रखे गये थ। यदि खण्ड (१) का क्षेत्र इसलिये संकुचित करना अभिप्रेत था कि किसी धर्मार्थ या धार्मिक न्यास की ओर से या उन ही के द्वारा चलाये गये व्यवहार अथवा न्यासग्रस्त व्यवहार पर दी गई छूट को हटाया जाय तो पुराने खण्ड के परन्तुक के रूप में नया खण्ड जोड़ा जाना चाहिए था।"

चूंकि इस निर्णय के अनुसार इस संशोधन का मूल अभिप्राय सिद्ध नहीं हुआ, अतः आय-कर जांच आयोग ने अपनी सिफारिश संख्या ५४ में यह सुझाव दिया कि खण्ड (१क) की धारा ४ (३) (क) का परन्तुक बनाया जाना चाहिये। और विधेयक में बिल्कुल यही बात हुई है क्योंकि प्रवर समिति से ही यह चीज़ निकली हुई है।

मेरा तर्क यह है कि १९३६ में कमेटी ने अपनी सिफारिशों में यह बात कही थी। अतः अब जो भी प्रस्थापित हो रहा है, यह कोई नई चीज़ नहीं, किन्तु इस से तो केवल किसी अभिप्राय का स्पष्टीकरण होता है। और सदा से हमारा यही विचार रहा है कि यदि हमें न्यायिक निर्णय से इस बात का पता चले कि हमारे आलेख से मूल अभिप्राय सिद्ध नहीं होता तब तो हमें पुनः प्रयत्न करना होगा और दोबारा आलेख तैयार करना होगा ताकि मूल अभिप्राय को पूरा किया जा सके।

जहां तक भारत से बाहर के धर्मार्थ प्रयोजनों का प्रश्न है, खण्ड ४(३) (१) के प्रस्तुत संशोधन में विशेष रूप से एक और शर्त जोड़ी गई है जो इस प्रकार है कि धर्मार्थ प्रयोजन इसी बात से सम्बन्धित होना चाहिये जो भारत के अन्दर हुआ हो। यह भी आय कर जांच आयोग की सिफारिश संख्या ५२ पर आधारित है, और इसमें वेल्ज़ बनाम इंगलैण्ड (१८९८ ए० सी० ७५८) मुकद्दमे में लार्ड हाबहाऊस द्वारा व्यक्त किये गये विचारों को ध्यान में रखा गया है।

यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार की शर्त निर्विवाद है—दी गई छूट में यही बात बताई गई है। किन्तु उक्त विभाग ने पहले से शासन में, भूतकाल में, कोई प्रतिबन्धित रचना स्वीकार नहीं की थी। लार्ड हाबहाऊस ने इस प्रकार विचार प्रगट किये थे। चुनाचे उन्होंने महत्वपूर्ण बातें बताई हैं, और मैं पुनः एक छोटा सा उद्धरण दे रहा हूं :—

"ऐसा शायद ही हो सकता है कि विक्टोरिया की संसद् को सामाजिक तथा औद्योगिक सम्मेलन तथा विश्व के उद्यमों के लिये इतना सम्मान हो कि वह रोम की जैज़ुइट सोसाइटी इंग्लैण्ड के एमलगमेटेड इंजीनियर्स, तथा वहां की एथिनेयम क्लब, और अफ्रीका स्थित विटवाटरसैण्ड कम्पनी को, यदि वे अपनी निधियों को विक्टोरिया की भूमि में न्यस्त करना चाहते हों, अथवा बन्धकों में लगाना चाहते हों, अथवा सरकारों स्कन्धों की खरीद

[श्री सी० डी० देशमुख]

में व्यय करना चाहते हों, आय कर से विमुक्ति दे। इस बात के लिये कि तत्त्वभञ्जन न्यायाधीशों को विक्टोरिया के विधान-मण्डल की ओर से इस प्रकार के अभिप्राय निकालने के लिए प्रवृत्त किया जाय, उन्हें विमुक्ति के शीर्षकों के साधारण शब्दों में पाई जाने वाली अभिव्यंजना की अपेक्षा और भी अधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति की आवश्यकता पड़ेगी। उन्हें यह धारणा अधिक तर्कसम्मत लग रही है कि शीर्षक (ग), (घ) तथा (ङ) बनाते समय" (हमें यह मालूम नहीं कि ये शीर्षक क्या हैं)--"विधान मण्डल उन मण्डलों या समितियों का उल्लेख कर रहा था जो विक्टोरिया के लिये या उस में काम कर रहे थे और यही तर्क शीर्षक (ङ) पर भी लागू होता है।"

अतः अब जो भी शर्त निगमित है वह उस स्थिति को स्पष्ट कर देती है जिसकी निर्विवाद उपस्थिति यहां मानी जानी चाहिये थी। यह भी देखा जाय कि धारा १५ ख में जो छूट बताई गई है, वह उन दानाश्रयों पर लागू होती है जो भारत में संस्थापित धर्मार्थ संस्थाओं को दिये गये हों। यही एक समानान्तर उपबन्ध है जिसे सदन ने स्वीकार किया है।

अब मैं दान धर्मार्थ के अतिरिक्त अन्य प्रयोजनों के लागू किये जाने का प्रश्न उठाता हूं। अन्य उपबन्ध जो छूट को वापिस लेता है और आय को भी तभी कर निर्धार्य बनाता है जब इसे अन्य प्रयोजनों के लिये लागू किया जाय अथवा इसका संचय रुक जाय, अथवा धर्मार्थ प्रयोजनों के लिये अलग रखा जाय,--हमारी राय में उस छूट को उड़ाने के लिये आवश्यक है जो विगत वर्षों में ग़लती से दी गई थी। यह तो विश्वासघात के लिये किसी अन्य विधि के परिणामस्वरूप मिलने वाले फलों से भिन्न है। तो यह दूसरी महत्वपूर्ण बात पूछी गई थी।

अब तीसरी बात धारा १८ क के अन्तर्गत दिये गये कर पर सरकार द्वारा देय ब्याज के सम्बन्ध में पूछी गई थी। श्री एन० सी० चटर्जी, पंडित ठाकुरदास भार्गव तथा अन्य माननीय सदस्यों ने भी इसकी ओर निर्देश किया था। तो, १९४४ में धारा १८ के पूरक के रूप में धारा १८क निर्दिष्ट की गई थी, और यह धारा १८ विशेष प्रकार की आयों जैसे वेतन, प्रतिभूतियों पर ब्याज तथा अन्य ब्याज जो अदायगी के साथ समय की प्रत्यक्षतः आय है, पर से कर घटाने के सम्बन्ध में है। धारा १८ क के प्रारम्भ के शब्द इस प्रकार हैं :--

"जिस आय के सम्बन्ध में इस प्रकार का उपबन्ध नहीं रखा गया हो कि अदायगी के समय आयकर घटाया जायेगा . . . ."

अब यह बात स्पष्ट है कि धारा १८ क की परियोजना मूलतः धारा १८ की परियोजना की संपूरक है तथा इसका उद्देश्य वर्तमान आय पर कर वसूल करना है यद्यपि प्रासंगिक रूप से इस ने मुद्रास्फीति को रोकने में भी सहायता दी। परियोजना के प्रथम वर्ष में करदाताओं को दो कर देने पड़ते थे, एक चालू वर्ष की आय पर तथा दूसरा पूर्व वर्ष की आय पर, लोगों को प्रवृत्त करने के लिये प्रतिशत सादा ब्याज दिया गया जो कि उस समय उचित हो सकता था परन्तु अब उचित नहीं है। यह परियोजना वास्तव में उस परियोजना से भिन्न नहीं जो कि १९१८ के अधिनियम के अन्तर्गत प्रचलित थी। १९१८ के अधिनियम के अन्तर्गत कर चालू वर्ष की आय के आधार पर लगाया जाता था परन्तु अन्तर्कालीन व्यवस्था के लिये गत वर्ष की आय के ध्यान रखा जाता था. तो कर निर्धारण के प्रथम

वर्ष में करदाता को दो कर देने पड़ते थे। एक तो पूर्व वर्ष की आय के आधार पर अन्तिम कर होता था तथा दूसरा चालू वर्ष के लिये अन्तर्कालीन कर था--जिसका समन्वय अगले वर्ष किया जाता था जबकि चालू वर्ष की आय निर्धारित की जाती थी। १९२२ के अधिनियम में यह आधार बदल दिया गया तथा कर अब पूर्व वर्ष की आय पर लिया जाता है; निस्सन्देह यह उस वित्तीय वर्ष के लिये राजस्व होगा जिसमें कि इसे वसूल किया जाये। १९१८ अधिनियम की समन्वय प्रणाली १९२२-२३ के लिये जारी रखी गई तथा अन्तिम समन्वय के बाद इसे बन्द कर दिया गया। मैं यहां धारा २५ (३) तथा (४) की ओर निर्देश करता हूं जहां कि अधिनियम १९१८ के अन्तर्गत करनिर्धारित कारबार बन्द किया जाता है अथवा उसे कोई दूसरा व्यक्ति चलाता है। तो, धारा १८ क की परियोजना १९१८ में प्रचलित परियोजना से कोई भिन्न नहीं। तथा इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि राजस्व में वह नुक्सान न होने पाये जो कि आय अर्जन के दिनांक तथा कर निर्धारण के दिनांक के बीच के समय में हो पाये।

ज़रा अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि ब्रिटेन में कर निर्धारण का आधार क्या है। वहां यह चालू वर्ष की आय है, प्रत्येक कारबार के लिये दो कर अदा करने पड़ते हैं, एक पूर्व वर्ष के लिये तथा दूसरा चालू वर्ष के लिए, तथा कारबार बन्द होने पर उपरोक्त का अन्तिम रूप से समन्वय किया जाता है।

इस पृष्ठ भूमि में प्रश्न यह है कि धारा १८ क के अन्तर्गत जो कर वसूल किया जायगा, क्या वह एक अग्रिम कर है। जो लोग ऐसा कहते हैं उनका तर्क आय कर अधिनियम की धारा ३ पर आधारित है। यह कर पूर्व वर्ष की आय पर है जो कि उसके बाद के वर्ष में वसूल किया जाता है। इसी आधार पर यह बताया जाता है कि यह एक अगाऊ कर है, जांच कमीशन की सिफारिश नम्बर ५७, ५८ तथा ५९ भी इस बात का समर्थन करती हैं

यह कहा जा सकता है कि धारा १८ क के अन्तर्गत जो कर लिया जाता है वह 'अगाऊ' कर नहीं है क्योंकि यह समय से पूर्व ही अदा किया जाता है। यहां यह शब्द इसी अर्थ में प्रयोग में लाया गया है क्योंकि यह कर धारा १८ क के अन्तर्गत लिया जाता है। अगाऊ कर यह इस तरह से है कि यह अन्तर्कालीन है तथा नियमित कर निर्धारण के पश्चात् इसका समन्वय होता है। यह एक महत्वपूर्ण अन्तर है। इस बात को दृष्टि में रखते हुए धारा १८ तथा धारा १८ क के अन्तर्गत आरम्भ में ही जो कटौतियां की जाती हैं वह एक जैसी हैं क्योंकि यह दोनों कटौतियां करों के चालू दरों पर की जाती हैं, तथा नियमित कर निर्धारण होने पर दोनों का समन्वय होता है। अन्तर केवल यह है कि धारा १८ क की आय के सम्बन्ध में जो कर लिये जाते हैं उनका समन्वय सम्बन्धित वित्तीय वर्ष में चालू दरों के अनुसार होता है तथा तदनुसार कभी बढ़ती से लाभ अथवा हानि होती है, जबकि वेतनों आदि पर जो कर लिया जाता है, उसका समन्वय कटौती के वर्ष में चालू दरों के अनुसार होता है।

यह प्रश्न कि क्या बढी हुई ब्याज दरें अदा की जानी चाहियें, केवल तभी उठ सकता है जबकि समन्वय करने पर यह पता चले कि करदाता ने उस से अधिक धनराशि की घोषणा की है जो कि उसके पास बाद में सिद्ध हुई हो। इस बात का फैसला करना पूर्णतया उसके हाथ मे है, यदि वह चाहे तो वह उस से कम अदा करा सकता है जिसका कि बाद में पता चले। अतः यह उपबन्ध अत्यन्त ही विशेष प्रकार के मामलों के लिए रखा गया है। इस बात को दृष्टि में

[श्री सी० डी० देशमुख]

रखते हुए मैं यह नहीं समझता हूं कि यह ब्याज दर बढ़ाने की कोई बात है।

६००० रुपये से अधिक आय वाले कर-दाताओं को जो ब्याज दिया गया है वह डेढ़ करोड़ रुपया है। अधिक धनवान वर्गों को यह सुभीता देने में कोई औचित्य नहीं है।

बड़े बड़े करदाताओं द्वारा कर अपवंचन जारी रखने के सम्बन्ध में कुछ कहा गया है, श्री चटर्जी, श्री बोगावत तथा अन्य व्यक्तियों ने इस बात का उल्लेख किया है पहली बात यह है कि आय कर जांच आयोग अभी भी अपना कार्य कर रहा है तथा इस ने पहले ही ८६० मामलों की सूचना दी है, इस में ४० करोड़ रुपये की आय तथा लगभग २० करोड़ रुपये का कर, जिसमें से कि ९ करोड़ रुपया पहले ही वसूल किया गया है, ग्रस्त है। आय कर जांच आयोग पर मेरे विचार में इस समय तक ५० लाख रुपये से कम कुछ कम ही व्यय हुआ है।

अक्तूबर १९५२ से केन्द्रीय राजस्व बोर्ड के साथ एक अलग जांच विदेशालय सम्बद्ध किया गया है। इसका काम कर अपवंचन के बड़े बड़े मामलों का तथा अधिकारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार सम्बन्धी शिकायतों का निवारण करना है। मेरा विचार है कि यह प्रणाली धीरे धीरे अपनी जड़ें मज़बूत कर रही है तथा जनता को इससे फायदा पहुंचना शुरू हुआ है।

इसमें कर्मचारी वर्ग की कमी की बात भी आ जाती है। कई वर्षों से हमारे पास कर्मचारियों की कमी थी। यह कमी युद्ध के वर्षों में, जबकि आय में एकाएक वृद्धि हुई, और भी अधिक देखने में आई। कर्मचारियों को भर्ती करने की तथा उन्हें ट्रेनिंग देने की व्यवस्था की भी कोई सीमा है। उन्हें लेखा के सम्बन्ध में उच्च प्रशिक्षा देनी पड़ती है। कभी कभी उन्हें मारवाड़ी तथा अन्य स्थानीय भाषाएं भी सीखनी पड़ती हैं, उन्हें एक परीक्षा पास करनी होती है जिसमें कि उन्हें जटिल लेखों को समझने की योग्यता दिखानी पड़ती है। १९५१ के संशोधक विधेयक में, जो कि व्ययगत हुआ है, मौके पर की जांच किताबों तथा दस्तावेज़ों को ढूंढने तथा ज़ब्त करने के अधिकार आदि का उपबन्ध रखा गया था। यह उपबन्ध चूंकि बड़ा विवादास्पद है, इसलिये हम ने इसे इस विधेयक में समय बचाने के लिये शामिल नहीं किया है। पुराने विधेयक में अनर्ह व्यक्तियों, विशेष कर इस विभाग के सेवानिवृत्ति व्यक्तियों द्वारा करदाताओं का प्रतिनिधित्व करने पर भी कुछ रोक लगा दी गई थी। मेरे विचार में यह प्रश्न श्री टी० एन० सिंह ने उठाया था कि उन्हें प्रेक्टिस करने की अनुमति क्यों दी जाती है। यदि वह अन्यथा अर्हत हों तो हम केवल एक सीमित समय के लिए उन पर रोक लगा सकते हैं, हमेशा के लिये नहीं, अर्थात् हम उन से केवल यह कह सकते हैं कि रिटायर होने के बाद वह दो अथवा तीन वर्ष तक प्रेक्टिस नहीं कर सकते हैं। यह कहना बहुत ही कठिन प्रतीत होता है कि शेष जीवन के लिये वह उस तरीके से अपनी आजीविका नहीं कमा सकते हैं जिससे कि वह परिचित हैं।

भारत से जाने वाले व्यक्तियों द्वारा कर शोधन प्रमाण पत्र प्राप्त करने के सम्बन्ध में कई माननीय सदस्यों ने प्रश्न उठाया। इसके उपबन्ध लगभग वही है जो कि अन्य देशों जैसे कि पाकिस्तान, आस्ट्रेलिया आदि में प्रचलित हैं। सम्बन्धित व्यक्ति इन से अपरिचित नहीं हो सकते हैं। जब वह दूसरे देशों को चले जाते हैं तो उन्हें किसी भी तरह इन नियमों का पालन करना पड़ता है, मैं मानता हूं कि इस में कुछ न कुछ असुविधा अनिवार्य

है। परन्तु राजस्व की दृष्टि से यह आवश्यक है। पहले ही दस करोड़ रुपया उन लोगों के के पास बकाया पड़ा है जो कि दूसरे देश अथवा देशों को चले गए हैं तथा उसे वसूल करने लिये भारत में उनकी कोई परिसम्पत्त नहीं है। इस सम्बन्ध में किसी वैध उपबन्ध के न होने के कारण पहले ही काफी नुक्सान पहुंचा है। और भी हम ऐसे नियम बनाने के लिये तैयार हैं जिससे कि यथासम्भव अधिकतम उन्मुक्ति प्राप्त होगी तथा जिससे कि कर शोधन प्रमाण पत्र बिना किसी विलम्ब के जारी किये जा सकें। इस आश्वासन को ध्यान में रखते हुए मुझे आशा है कि कि माननीय सदस्य इस उपबन्ध को स्वीकार करेंगे।

जीवन बीमा कम्पनियों को रियायतें देने के सम्बन्ध में कुछ कहा गया। श्री वी० पी० नायर ने बताया कि इसका अधिकांश भाग कम्पनियों को मिलता है, बीमा पत्र-धारियों को नहीं। इन कम्पनियों को आय-कर जांच आयोग की सिफारिशों के आधार पर यह रियायतें दी जाती हैं। बीमा कंट्रोलर की सलाह से इन में संशोधन किया गया। आय कर जांच आयोग को इस बात का पता चला कि हाल ही के वर्षों में वेतन दर बढ़ाये जाने के कारण प्रबन्ध व्यय बढ़ गया है। बीमा कंट्रोलर इस पर अपनी दृष्टि रखे हुए है तथा वह समय समय पर स्थिति का पुनर्विलोकन करता है।

बीमा पत्रधारियों के लिए रक्षित बोनस में जो वृद्धि की गई है वह इस सिद्धान्त पर की गई है कि यह केवल उन अतिरिक्त प्रीमियमों को पेश करता है जो कि बीमा पत्रधारियों से वसूल किये जाते हैं तथा यह वास्तव में कम्पनी की आय नहीं होती है। बीमा पत्रधारियों के लिए जो बोनस रखा जाता है, हम उस सारे की अनुमति नहीं दे सकते हैं क्योंकि २० प्रति-शत भाग विनियोजनों से प्राप्त आय है तथा यह अतिरिक्त प्रीमियमों से प्राप्त आय नहीं है। ब्रिटेन में बीमा पत्रधारियों के लिये जो बोनस रक्षित रखा जाता है, उसकी अनुमति दी जाती है। परन्तु बीमा प्रीमियमों पर आय-कर में जो रियायत दी जाती है वह निम्न दर पर दी जाती है। यह कहना, कि यह बीमा कम्पनियां बड़े बड़े करदाताओं के नियंत्रण में होती हैं, कोई कारण नहीं कि इन्हें इस सुभीते से क्यों वंचित रखा जाये।

श्री अल्तेकर ने कहा कि म्यूचवल बीमा कम्पनियों को उसी तरह माना जाना चाहिये जैसे कि सरकारी समितियों को माना जाता है। जीवन बीमा का कारबार किसी स्वत्वा-धिकार प्राप्त समवाय द्वारा चलाए जाने में अथवा किसी म्यूचवल बीमा कम्पनी द्वारा चलाये जाने में कोई अन्तर नहीं, सिवाय इसके कि पूर्वोक्त कम्पनी को अपनी फालतू बचत का ९० प्रतिशत भाग बीमापत्र-धारियों के बोनस के लिए रखना पड़ता है जबकि उपरोक्त समवाय को अपनी सम्पूर्ण फालतू बचत बोनस के लिए रखनी पड़ती है। म्यूचवल बीमा कम्पनियां स्वत्वा-धिकार प्राप्त समवायों की अपेक्षा कर भी कम दे देती हैं। उन्हें अधि-कर में दो आना प्रति रुपया की कटौती दी जाती है जबकि अन्य कम्पनियों को डेढ़ आना प्रति रुपया की कटौती दी जाती है। म्यूचवल बीमा कम्पनियों में करयोग्य आय स्वत्वाधिकार प्राप्त कम्पनियों की अपेक्षा आठ प्रतिशत कम होती है। यह इन्हें काफी फायदा है। इस में और अधिक रियायतें देने की कोई गुंजाइश नहीं। वास्तव में स्वत्वाधिकार-प्राप्त समवायों ने म्यूचवल बीमा कम्पनियों को यह सुभीते देने के सम्बन्ध में विरोध भी किया था।

[श्री सी० डी० देशमख]

सुझाव दिया गया है कि अनुसूचित बैंकों ो प्राप्त पूजी की एक वितति तक कर-मुक्त कोष रखने की अनुमति दी जाये, तथा जब उन की पूंजी २५ लाख रुपये से कम हो तो उन्हें निगम कर से मुक्त रखा जाये। इस सुझाव को नहीं माना जा सकता है। इस सम्बन्ध में भेदभाव की नीति बर्तने की अनुमति नहीं है। इन पर काफी निगरानी भी रखनी पड़ती है क्योंकि इनके पास पूंजी कम होती है। जिन कम्पनियों की आय २५,००० रुपये से कम होती है उन्हें पहले ही तीन आने की रियायत मिलती है तथा बहुत से अननुसूचित बैंक इस श्रेणी में आ जाते हैं उन्हें अधि-कर में तीन आने की रियायत दी जाती है तथा वह केवल एक आना नौ पाई के हिसाब से यह अदा करते हैं।

आरोप लगाया गया है कि क्षतिपूर्ति के रूप में बाहर से प्राप्त पूंजी पर जो रियायत दी गई है उस से चोर बाज़ार से सम्बन्ध रखने वाले लोग विदेशों में एकत्रित मुनाफे को यहां ला सकेंगे। संशोधन के खंड ३(१)(क) के पांचवें परन्तुक में कहा गया है कि यह रियायत केवल उतनी आय अथवा मुनाफे पर दी जायगी जो भारत से बाहर कमाया गया हो तथा जिस पर इस अधि-नियम के अन्तर्गत कर नहीं लग सकता है, जब तक कि इसे ऐसे क्षेत्र में न लाया जाये अथवा प्राप्त किया जाये जहां कर लगता हो। वास्तव में यह रियायत १९३९ से पहले कमाये गए मुनाफा पर लागू होती है क्योंकि उस समय तक कर केवल उसी आय पर लगाया जाता था जो विदेशों से यहां भेजी जाती थी न कि उस पर जो कि उसे वहां प्राप्त होती थी। कर मुक्ति देने से पूर्व करदाता को यह सिद्ध करना होगा कि मुनाफा, जो उसे वसूल हुआ है, वह विदेश में कमाया गया है तथा एक ऐसे समय से सम्बन्ध रखता है जबकि उसकी आय पर उपलब्धि के आधार पर कर नहीं लगता था। चोर बाज़ारी, मेरे विचार में, युद्धोत्तर काल की एक उपज है। इसलिए..

रक्षा संघटन मत्री (श्री त्यागी): यह कर-मुक्त है।

कुछ माननीय सदस्य: युद्धकाल की उपज है।

श्री सी० डी० देशमुख: मेरा आशय यह है कि यह १९३९ के बाद की उपज है। इसलिए इन रियायतों द्वारा भारत में चोरबाजार का धन लाए जाने की कोई आशंका नहीं है।

जहां तक करनिर्धारण में विलम्ब के प्रश्न का सम्बन्ध है इस में कोई संदेह नहीं, कि युद्ध काल में इस विभाग में कर्मचारियों की कमी के कारण काफी से ज्यादा काम एकत्रित हुआ जिसे कि निबटाया नहीं जा सका। १९४७ से जब से कि हम ने ज़िम्मेदारी सम्भाली इस सम्बन्ध में सक्रिय रूप से कार्यवाही की गई है। इस समय तक लगभग ३५० अतिरिक्त अधिकारी भर्ती किये जा चुके हैं। संघ लोक सेवा आयोग २१५ और आय-कर अधिकारी भर्ती करने जा रहा है। छोटे मोटे मामलों को बिना किसी अति सावधानी के निपटाने के लिए कहा गया है। कर-मुक्ति की सीमा बढ़ाये जाने के कारण कर दाताओं की संख्या में ७०,००० की कमी हो जायगी। इस तरह से अन्य मामलों की ओर अधिक ध्यान दिया जा सकता है। करदाता भी काम में बाधा डालने का प्रयत्न करते रहते हैं। और अन्त में, आय-कर अधिकारियों को ट्रेनिंग देने में समय लग जाता है। आय-कर का काम एक जटिल

काम है । इस सम्बन्ध में कानून भी बहुत पेचीदा है । कर निर्धारण में विलम्ब का अर्थ यह है कि कर दाताओं को अपने दायित्वों का कोई ज्ञान नहीं होता है तथा जिस समय तक करनिर्धारण का काम पूरा होता है उस समय तक पैसा निकल जाता है । इसलिए जहां तक करदाता का सम्बन्ध है उसे उस हद तक अपना कर अदा करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये जहां तक कि वह उसे उचित समझता हो । यदि वह बुद्धिमान होगा, तो वह यथा सम्भव ठीक ठीक प्राक्कलन तैयार कर सकता है, क्योंकि धारा १८ (क) उसे अपने अनुमान के आधार पर आधारित कर का ८० प्रतिशत भाग अगाऊ के रूप में अदा करने की अनुमति दे देता है । धारा २३ ख के अन्तर्गत वह आम-कर अधिकारी द्वारा अन्तर्कालीन कर निर्धारण भी करा सकता है । यदि उसके आंकड़े ठीक होंगे तो अन्तिम करनिर्धारण के समय उसे और अधिक पैसा देने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी ।

एक माननीय सदस्य ने कहा कि आय-कर अधिकारी काफी काम नहीं करते हैं । वास्तव में तथ्य यह है कि आय-कर अधिकारियों के काम का एक विशेष स्तर निश्चित किया गया है, तथा इस बात पर कड़ी दृष्टि रखी जाती है कि उन का काम उस स्तर से कम अथवा नीचे न हो । कार्य स्तर निश्चित करने की प्रणाली की कई तरह से आलोचना की गई है किन्तु यह कभी नहीं कहा गया है कि इस से आय-कर अधिकारियों को काफी काम मिलता है । आय-कर जांच आयोग के पैरा ४०१ में भी यह बात कही गई है ।

श्री बोगावत ने सुझाव दिया कि निरीक्षकों का कार्य संविहित रूप से निश्चित किया जाना चाहिये तथा उन्हें हिसाब किताब जब्त करने का अधिकार दिया जाना चाहिये । निरीक्षकों को आय-कर प्राधिकार की परिभाषा के अन्तर्गत लाने के उद्देश्य उन्हें संविहित अधिकारी बनाना है । उन्हें कई प्रकार के काम निभाने पड़ते हैं तथा यही कारण है कि उन के कर्तव्यों को विस्तारपूर्वक संविधि में नहीं रखा गया है । वह वही काम किया करेंगे जो कि उन के उच्च अफसर उन्हें सौंपा करेंगे । निरीक्षक का काम तो निरीक्षण करना ही है । पर्यालोकन के समय हिसाब किताब ज़ब्त करने का अधिकार देने की आय-कर जांच आयोग ने सिफारिश नहीं की थी तथा इस बिल के उद्देश्यों के लिए इस पर विचार नहीं किया गया ।

कर न अदा करने पर, यद्यपि वह कर अपील करने पर कम किया गया हो अथवा मंसूख किया गया हो, जुर्माना लगाने के असमन्याय्य के बारे में भी कुछ कहा गया । इस सम्बन्ध में हम ने अक्तूबर, १९४९ में अनुदेश जारी किये कि जब अपील करने पर कर मंसूख किया गया हो तो इस प्रकार का जुर्माना वसूल करना न्यायपूर्ण नहीं होगा, तथा कमिशनरों को धारा ३३क के अन्तर्गत जुर्माना से सम्बन्धित अपने आदेश बदलने के लिये कहा गया । स्पष्टतः श्री भार्गव के ध्यान में कोई इक्की दुक्की घटना आई है । यदि किसी मामले में हमारे अनुदेशों का पालन नहीं किया गया है तो मैं माननीय सदस्य का कृतज्ञ हूंगा यदि वह उस विशेष मामले को मेरे ध्यान में लायेंगे । मैं भी उन्हें इस सम्बन्ध में लिखने का प्रयत्न करूंगा ।

इन शब्दों के साथ मैं अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूं ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि भारतीय आय-कर अधिनियम, १९२२ में फिर संशोधन करने वाले विधेयक को प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विचारार्थ ग्रहण किया जाए ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खंड २ विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खंड ३--(धारा ४ आदि का सशोधन)

श्री वी० पी० नायर : मैं प्रस्ताव करता हूं :

(१) पृष्ठ १७ पंक्ति ६ में, "who" (जो) के बाद "was ordinarily resident, but" (साधारणतः निवासी था, किन्तु) निविष्ट करिए ।

(२) पृष्ठ १७ पंक्ति १६ में, "person" (व्यक्ति) के बाद "ordinarily" (साधारणतः) निविष्ट करिए ।

(३) पृष्ठ १७ में--

(क) पंक्ति २४ में '(१)' के स्था पर '(२)' आदिष्ट करिए ।

(ख) पंक्ति २७ में '(२)' के स्थान पर '(३)' आदिष्ट करिए ।

(ग) पंक्ति ३४ में '(३)' के स्थान पर '(१)' आदिष्ट करिए ।

(४) पृष्ठ १८ में पंक्ति ४ से १२ तक के लिए आदिष्ट करिए :

"(१) धारा १६ की उपधारा (१) के खंड (ग) के उपबन्धों के अधीन किसी ऐसी संपत्ति पर अर्जित कुछ आय, जो अंशतः या पूर्णतः किसी न्यास या वैध दायिता के अधीन धार्मिक या दान के प्रयोजन से रही हो, जहां तक इस आय का उपयोग ऐसे प्रयोजन से ही होता है या उसमें लगाने के लिए उसे पृथक रख दिया जाता है"।

(५) पृष्ठ १८ पंक्ति २५ में,

"wholly" (पूर्णतः) के बाद "or finally set apart" (या अंतिम रूप में पृथक रखी गई) निविष्ट करिए ।

(६) पृष्ठ १९, पंक्ति ४१ में, अन्त में जोड़िये :

'और "which does not ensure for the benefit of the public" (जिनसे जनता को लाभ नहीं पहुंचेगा) शब्द लुप्त किए जाएंगे ।'

(७) पृष्ठ १७ में, पंक्ति ३८ के बाद निविष्ट करिए :

"परन्तु यह भी कि इस धारा के अधीन कर सम्बन्धी यह रियायत उन व्यक्तियों को न दी जाएगी, जिन के कारोबार संबंधी हित भारत में हैं और उन कारोबारों की विदेशस्थ शाखाओं से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध हैं ।"

श्री नम्बियार (मयूरम्) : मैं प्रस्ताव करता हूं :

(१) पृष्ठ १८ पंक्ति ३९ म, अन्त में जोड़िए :

'और निम्नांकित परन्तुक जोड़ दिया जाएगा, अर्थात् :

"परन्तु वह मकान औद्योगिक मजदूरों, निम्न मध्य वित्त के लोगों, क्लर्कों या चपरासियों के किराए पर उठाने के लिए बनाया गया हो और उसका किराया सरकार द्वारा निश्चित किया गया हो"।

(२) पृष्ठ १८ में,--

पंक्ति ४२ से ४९ तक लुप्त करिए ।

(३) पृष्ठ १९ में,--

पंक्ति १ से १४ लुप्त करिए ।

(४) पृष्ठ १९ में,--

पंक्ति १५ से २३ लुप्त करिए ।

उपाध्यक्ष महोदय द्वारा उक्त संशोधन सदन में प्रस्तुत किए गए ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब जो सदस्य बोलना चाहें, बोल सकते हैं । यदि कोई नहीं बोलना चाहता तो मैं माननीय मंत्री को बुला लूंगा ।

श्री वी० पी० नायर : मुझे अपने अन्तिम संशोधन पर ही बोलना है । मुझे याद नहीं कि मैंने स्वयं 'चोरबाजारी धन' का निर्देश किया था और यदि माननीय मंत्री कहते हैं कि मैंने उसका निर्देश किया था, तो उन को मेरा भाषण पढ़ लेना चाहिए । मेरे संशोधन का लक्ष्य कुछ बुराइयों को दूर करना है । मान लो देश की किसी फर्म की शाखा अमरीका में है । वह फर्म वहां पर चीज़ें खरीद कर प्रायः दूने भाव में यहां भेजती है और यह अतिरिक्त रुपया विदेशी मुद्रा में विदेशी बैंकों में जमा रखती है । सरकार को विदेशी विनिमय प्राप्त करने में भले ही कठिनाई हो, पर बट्टा देने पर निजी व्यापारियों को कोई परेशानी नहीं होती और ये फर्में इस प्रकार वह चोरबाज़ारी का रुपया इकट्ठा करती रहती हैं । और सरकार कुछ नहीं कर पाती । इसके सिवा एक दूसरा व्यापार निर्यात पर चलता है । १०० रुपए का माल भारत से उन विदेशस्थ फर्मों के नाम ३० रुपये में भेज दिया जाता है और शेष ७० रुपये अमरीका में ही बने रहते हैं ।

श्री टी० एन० सिंह (बनारस जिला-पूर्व) : पर मैं माननीय सदस्य को बता दूं कि रक्षित बैंक को यह कम दाम या अधिक-दाम पर माल भेजने-मंगाने की बात विदित है । और वह उचित कार्यवाही करता है ।

श्री वी० पी० नायर : माननीय मित्र देव ज्योति बर्मन लिखित "बिरला भवन के रहस्य' पढ़ें, तो उन को इस कार्य प्रणाली का पता चल जाएगा । माननीय मंत्री रक्षित बैंक में रह चुके हैं और इन सब बातो से और इस 'बट्टा' से परिचित हैं । आय-कर बचाने के लिए नाना प्रकार के उपाय अपनाए जाते हैं । आशा है, वह वाणिज्य मंत्री से कुछ परामर्श करने के बाद हमें एक आश्वासन देंगे ।

उपाध्यक्ष महोदय : श्री नायर अपने दूसरे संशोधन पर भी बोल लें । मैं उन्हें बाद में न बुला सकूंगा ।

श्री वी० पी० नायर : ठीक है । बाद में मुझे बहुत अवसर मिलेंगे ।

श्री नम्बियार (मयूरम्) : मुझे मकान बनाने के लिए दी जाने वाली विमुक्ति के संबंध में अपने सूची ५ वाले संशोधन ४४ की चर्चा करनी है । साधारण लोगों के लिए औद्योगिक मजदूरों, निम्न मध्य वित्त लोगों, क्लर्कों और चपरासियों के लिए मकान बानने तक तो ठीक है, पर कर से बचने के ही लिए बड़े-बड़े महल खड़े करने वाले व्यक्ति को छूट नहीं मिलनी चाहिए । अन्यथा जन-साधारण का कोई लाभ न होगा । आशा है, माननीय मंत्री इन दो प्रकार के मकानों में भेद करने के लिए मेरा संशोधन स्वीकार कर लेंगे, और मेरी बात को ध्यान में रखते हुए न्याय करेंगे ।

श्री सी० डी० देशमुख : दो बातें उठाई गई हैं । एक तो श्री वी० पी० नायर ने शाखाओं को भेजे जाने वाले माल के विषय में कही है । जैसा उन्होंने कहा, मुझे इसका अनुभव है । मैं मानता हूं कि निर्यात में दाम कम लगाने और आयात में अधिक दाम लगाने की यह प्रणाली कुछ विदेशी विनिमय को बचा लेने और विदेशों में कुछ धन जमा रखने के उद्देश्य से चल रही है । हाल में माल के आयात में भी कम दाम लगाने के मामले भी देखने को मिले हैं, क्योंकि शायद अनुज्ञापत्र वाली मात्राएं पर्याप्त न थीं और वे राशि द्वारा निर्दिष्ट मात्रा से अधिक का आयात करना चाहते थे ।

यह समस्या वर्षों पहले रक्षित बैंक के ध्यान में आ चुकी है, और इन राशियों को पकड़ में लाने के लिए हम क्रमशः व्यवस्था कर रहे हैं । मैं नहीं समझता कि किसी भी

देश को इन बातों का पूरा निरोध करने में सफलता मिली है । यह संभव भी नहीं है । कानून तोड़ने वाले बड़े चतुर होते हैं और उनको सैंकड़ों तरीके मिल जाते हैं । पौंड वाले क्षेत्र की यह एक कठिनाई है, सस्ते पौंड की समस्या के कारण सब प्रकार की आढ़त चलती रहती है । मैं अनुमान नहीं कर सकता कि हमें कितना घाटा होता है और वह भी विदेशी विनिमय के उस क्षेत्र में, जो आंतरिक राजस्व के क्षेत्र से भी अधिक महत्वपूर्ण है । यथाशक्ति हम इस घाटे को कम करने की चेष्टा कर रहे हैं । सीमाशुल्क का प्राक्कलन करने वाले कुछ नियंत्रण रखते हैं । हाल में मेरे माननीय सहयोगी ने एक सूचना-विभाग खोला है, जिस का कार्य इस प्रकार के दुरुपयोग पर दृष्टि रखना होगा । पर मैं नहीं समझता कि चूंकि हम इस छिद्र को रोक नहीं पाते, हमें देश के लिए इतनी आवश्यक पूंजी में हस्तक्षेप करने का अंतिम उपाय अपनाना चाहिए । अतः वस्तुतः यह अनुपात-भाव का प्रश्न है और मैं यह नहीं मान सकता कि चूंकि श्री नायर द्वारा बताई गई स्थिति में पूरी सफलता नहीं मिली है अतः हम इस पुरःस्थापित उपबंध को बदल दें । इस कारण मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता ।

फिर श्री नंबियार का संशोधन है । उस का उद्देश्य है कि विमुक्ति केवल उन्हीं मकानों को दी जाय, जो अपेक्षतया निर्धन व्यक्तियों के लिए बनाए गए हो और जिन का किराया सरकार द्वारा निश्चित किया जाए । यह विमुक्ति मकानों की कमी की दृष्टि में उनके बनाने में कुछ लालच देने की दृष्टि से रखी गई है और आर्थिक क्षेत्र में निर्धनों और अमीरों के लिए होने वाली कमियों का वर्गीकरण वस्तुतः असंभव है । स्थिति बड़ी गोलमोल है । जब अधिक मकान बन जायेंगे तो, किराए कम हो जाएंगे और यदि वे मकान अमीरों के लिये बने हों तब भी कोई बात नहीं क्योंकि पर्याप्त क्रयशक्ति रखने वाले लोग उन अधिक दामों वाले मकानों को खरीद लेंगे और कुछ दूसरे मकान भी उपलब्ध हो जाएंगे और इस साधारण हलचल में मुझे विश्वास है कि निर्धनों को भी भाग मिलेगा । अस्तु कुछ भी सही मकानों का नियमन और निर्माण आयकर अधिनियम द्वारा नहीं चलाया जा सकता और यदि फिर भी समस्या बनी रहेगी तो हमें एक दूसरे विधान द्वारा उसका सामना करना पड़ेगा । मेरे विचार से यह संशोधन इस रूप में समुदाय के सर्वांगीण हित में उचित न होगा और इसलिए मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता ।

श्री नम्बियार : मैं जान सकता हूं कि बड़ौदा भवन, मंडी भवन जैसे भवनों से निर्धनों को कैसे लाभ पहुंचेगा ।

श्री सी० डी० देशमुख : मेरा कहना यह है कि सभी कमियो में जितनी पूर्ति हो जाती है, उतनी सीमा तक दाम गिर जाते है और दाम गिरने पर पूरा समुदाय उससे लाभ उठाएगा । कोई यह नहीं कहता कि कोई अतिरिक्त लाभ केवल अमीरों को ही होता है । इससे उपलब्ध कुल निवास-स्थान मे भी वृद्धि हो जाती है ।

ग़रीब लोगों को इसी अर्थ में लाभ पहुंचेगा यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से नहीं । इस में कई वर्ष लगेंगे और यदि किसी को बड़े मकानों आदि पर आपत्ति है, तो मेरा कहना है कि यदि योजनाबन्दी के प्रयोजनों के लिए ऐसा करना उचित हो तो अधिक प्रत्यक्ष ढंग अपनाने चाहिएं ।

श्री वी० पी० नायर : श्रीमान् क्या ऐसी राशि की अधिक से अधिक सीमा

निश्चित की गई है जो भवनों पर खर्च की जा सकती है और जिस पर कर नहीं लगेगा ?

श्री सी० डी० देशमुख : जी, नहीं ।

इसके बाद उपाध्यक्ष महोदय ने खण्ड ३ में प्रस्तावित सारे संशोधन सदन के मतदान के लिए रखे और वे सब अस्वीकार कर दिए गए ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड ३ विधेयक का अंग बने ।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया ।

खण्ड ३ को विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड ४.—(धारा ५ आदि का संशोधन)

श्री बनर्जी : (मिदनापुर–झड़ग्राम) : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ २१ में, पंक्ति ४ के बाद निम्नलिखित को जोड़ दिया जाय :

"(i) Appellate Assistant Commissioners of Income-tax shall be subordinate to the Appellate Tribunal within whose jurisdiction they perform their functions; "

["(१) अपीलें सुनने वाले आय-कर सहायक आयुक्त उस अपील-न्यायाधिकरण के अधीन होंगे जिस के अधिकार क्षेत्र में वे काम करते हों";]

श्री एस० वी० एल० नरसिंहम् (गुंटूर): मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ २१ में ,

(क) पंक्ति २९ में "may demand" ("मांग सकता है") के स्थान में " if demands " ("यदि मांग") को आदिष्ट किया जाय ।

(ख) पंक्ति ३२ में " he " ("वह") के बाद " shall " ("गा") को निविष्ट किया जाय ।

(ग) पंक्ति ३२ में, "re-heard " ("फिर से सुनी जाय") के स्थान में "heard denovo" ("नए सिरे से सुनी जाय") को आदिष्ट किया जाय ।

इस के बाद उपाध्यक्ष महोदय ने उपरोक्त संशोधन सदन के सामने प्रस्तुत किए ।

श्री एस० वी० एल० नरसिंहम् : मेरा संशोधन तो स्पष्ट ही है । मुझे तो इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है ।

श्री बनर्जी : माननीय मंत्री ने कहा था कि आय-कर अधिकारी न्यायापालिका के नहीं वरन् कार्य पालिका के अधिकारी हैं । कठिनाई तो तब होती है जब अपील सुनने वाला सहायक आयुक्त उन द्वारा किए गए करारोपण के विरुद्ध निर्णय देता है । और यह आज्ञा भी विद्यमान है कि सहायक आयुक्त के काम के सम्बन्ध में उसे कोई आज्ञा-आदेश या निर्देश नहीं दिया जायगा । परन्तु वास्तविक कठिनाई फिर भी सामने आती है क्योंकि अपील सुनने वाले अधिकारी केन्द्रीय राजस्व बोर्ड के अधीन होते हैं । और उप धारा (८) के अधीन इस बोर्ड को केन्द्रीय सरकार के सारे अधिकारियों को आदेश देने का अधिकार है । इसलिए इन अधिकारियों के लिए तटस्थता और स्वतंत्रता के साथ अपना काम करना कठिन होता है । इसलिए मेरा संशोधन यह है कि उन्हें सहायक आयुक्त के अधीन ही रखा जाय ।

श्री सी० डी० दशमुख : दो ही बातें हैं । पहली इस सम्बन्ध में है कि कर दाता यह मांग करे कि उस की अपील नए सिरे से सुनी जाय । विधेयक के वर्तमान रूप के अनुसार यदि कोई कर दाता चाहे तो उस की अपील फिर सुनी जा सकती है और यदि वह मांग करे—मेरे विचार से और ज़ोरदार कारणों के आधार पर—तो इस में कोई सन्देह नहीं कि आय-कर अधिकारी उस की

[श्री सी० डी० देशमुख]

बात अवश्य सुनेगा क्योंकि वह करदाता को विधि द्वारा दिए गए अधिकार की अपेक्षा नहीं कर सकता। मेरे विचार में यह संशोधन आवश्यक नहीं है।

दूसरी बात के सम्बन्ध में मैं अपने विचार विस्तारपूर्वक बता चुका हूं और यह ग़लत है कि अपील सुनने वाले सहायक आयुक्तों के न्याय सम्बन्धी काम में कोई हस्तक्षेप किया जाता है। इस सम्बन्ध में आय कर अधिनियम की धारा ५(८) में उपबन्ध है और मेरा यह दावा है कि इस का बड़ी सावधानी से पालन किया जा रहा है। इसलिये मैं इन दोनों संशोधनों को स्वीकार नहीं कर सकता।

श्री बर्मन (उत्तर बंगाल–रक्षित-अनुसूचित जातियां) : आयकर जांच आयोग ने इन अधिकारियों के सम्बन्ध में यह सिफारिश की थी कि इन की छुट्टी, बदली और नियुक्ति न्यायाधिकरण के हाथ में होनी चाहिए। कोई ऐसी कार्यवाही क्यों नहीं की गई जिस से कि लोगों के मन में जो भ्रम है उसे दूर किया जा सके ?

श्री सी० डी० देशमुख : मेरा विचार है कि न्यायाधिकरण का आयकर विभाग अधिकारियों के साथ प्रशासन के बारे में कोई सम्बन्ध नहीं है। एक बार हम इस मुख्य बात को मान लें कि उन का काम स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता––प्रत्येक व्यक्ति के काम का उस की छुट्टी, बदली तथा तरक्की से गहरा सम्बन्ध है –– तो हम इस प्रकार का प्राधिकार ऐसी किसी शक्ति को नहीं दे सकते जो कि उन की प्रशासन व्यवस्था के क्षेत्र से बिल्कुल बाहर है। इसी कारण हम इस समस्या का ऐसा असंतोषजनक हल स्वीकार नहीं कर सकते। जहां तक आय कर जांच आयोग की सिफारिश का सम्बन्ध है, मैं केवल यही कह सकता हूं कि या तो हम सारी बातें उस के सामने नहीं रख सके और या उस ने उन की ओर ध्यान नहीं दिया अब मैं इस का सारा इतिहास नहीं बता सकता परन्तु अब हम ने ये सारी बातें नए आयोग के सामने रखी हैं और वह इस निर्णय पर पहुंचा है कि हम जो कुछ कहते हैं ठीक है।

उपाध्यक्ष महोदय ने दोनों संशोधन सदन के मत दान के लिए रखे और दोनों अस्वीकार कर दिए गए हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड ४ विधेयक का अंग बने"।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खण्ड ४ को विधेयक का अंग बना लिया गया।

खण्ड ५––(धारा ५ क का संशोधन आदि)

श्री वी० पी० नायर : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ट २१ पंक्ति ४० में "civil" (असैनिक) शब्द को हटा दिया जाय।

उपाध्यक्ष महोदय ने यह संशोधन सदन के सामने प्रस्तुत किया।

श्री वी० पी० नायर : हम ने कुछ पृष्ठों की ओर निर्देश किया हो परन्तु इस समय हमारे पास जो पुस्तकें हैं उन में कुछ और पृष्ट हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : तो वह मुझे बताइए।

श्री वी० पी० नायर : अब तक तो हमीं को पता नहीं चला।

मैं यह संशोधन माननीय वित्त मंत्री द्वारा विचार करने के लिए रखता हूं । वे यह सोच लें कि ऐसा संशोधन करना ठीक होगा या नहीं ।

उपाध्यक्ष महोदय : क्या माननीय सदस्य यह चाहते हैं कि मेजिस्ट्रेट इस मामले का निर्णय करे ? मेजिस्ट्रेट से यह आशा नहीं कि उसे आयकर सम्बन्ध में कुछ अधिक मालूम होगा ।

श्री सी० डी० दशमुख : आयकर कानून के निर्वाचन में दीवानी कानून के कई प्रश्नों का भी निर्वाचन करना पड़ता है परन्तु इस का फौजदारी कानून से कोई सम्बन्ध नहीं ।

इस के बाद सदन ने श्री वी० पी० नायर को अपना संशोधन वापिस लेने की अनुमति दे दी और उन्होंने संशोधन वापिस ले लिया ।

संशोधन किया गया—

पृष्ठ २१ में,

पंक्ति ४६ के बाद निम्नलिखित का निवेश किया जाये :

(c) in Sub-Section (4) after the word 'shall' the word 'ordinarily' shall be inserted.

["(ग) उप-धारा (४) में 'shall' (गा) शब्द के बाद 'ordinarily' (साधारणतः) शब्द का निवेश किया जाय "]

—श्री सी० डी० देशमुख :

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"खण्ड ५ संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बने"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड ५ को संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड ६– (धारा ७ का संशोधन आदि)

श्री बनर्जी : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ट २२, पंक्ति ३ में,

"State Government" ("राज्य सरकार") के बाद "or of any local authority or recognised private institution" ("या किसी स्थानीय प्राधिकरण या स्वीकृत गैर सरकारी संस्था का ") इन शब्दों का निर्वेश किया जाय ।

मैं माननीय मंत्री से अपील करता हूं कि इस पर विचार करें और देखें कि वे इसे स्वीकार कर सकते हैं या नहीं ।

श्री सी० डी० देशमुख : मुझे खेद है कि मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता । क्योंकि स्थानीय प्राधिकरण और गैर सरकारी संस्था के कर्मचारियों की नौकरी की शर्तें एक सी नहीं होती और उन के वेतनों पर सरकार का किसी प्रकार का विनियमन नहीं होता है । इस लिए हम उन्हें और सरकारी कर्मचारियों [को एक साथ नहीं मान सकते ।

इस के बाद उपाध्यक्ष महोदय ने उपरोक्त संशोधन सदन के मतदान के लिए रखा परन्तु वह अस्वीकार कर दिया गया ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड ६ विधेयक का अंग बने" ।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड ६ को विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड ७—(धारा ९ का संशोधन आदि)

संशोधन किया गया :

पृष्ट २२, पंक्ति २९ व ३० में,

"it shall be lawful for the Income-tax officer to revise it"

(आय-कर अधिकारी के लिए इस का पुनरीक्षण करना वैध होगा) के स्थान में

"the Income-tax Officer cuncerned shall revise it"

(सम्बद्ध आय-कर अधिकारी इसका पुनरीक्षण करेगा)

को आदिष्ट किया जाय ।

—श्री वी० पी० नायर

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड ७, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बने ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड ७ को, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड ८ से ११ तक को विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड १२—(धारा १८ का संशोधन आदि) ।

श्री तुलसीदास : (मेहसाना पश्चिम) मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ २५ में, पंक्ति ४९ से ५१ में,

"Any deduction made" (कोई की गई कटौती) इन शब्दों के बाद आने वाले "and paid to the account of the Central Government" (और केन्द्रीय सरकार के हिसाब में दी गई) को हटा दिया जाय ।

इस के बाद उपाध्यक्ष महोदय ने उपरोक्त संशोधन के सदन के सामने प्रस्तुत किया ।

श्री तुलसी दास : मैं यह बताना चाहता हूं कि मेरा संशोधन क्यों आवश्यक है । माननीय मंत्री ने आज सवेरे कहा कि करारोपण का नया ढंग यह अपनाया जा रहा है कि चालू आय पर लगाया जायगा । इस लिए उनका विचार है कि सूद देने की अनुमति न दी जाय, प्रवर समिति द्वारा किए गए संशोधन के अनुसार केवल कुछ राशियों को छोड़ कर और किसी राशि पर सूद नहीं दिया जायगा । कर की राशि की प्राप्ति में भी देर लगती है । मुझे ऐसे उदाहरणों का भी पता है कि जहां १९४० या १९४१ का कर भी नहीं प्राप्त किया गया है । आयोग की सिफारिश का आधार यह बात थी कि यदि पेशगी भुगतान के लिए अधिक ब्याज देना है तो विभाग अधिक चौकन्ना होगा और कर निर्धारण शीघ्र कर लेगा । प्रश्न केवल कर निर्धारण के ढंग से पुनरीक्षण का नहीं है । मैं चाहता हूं कि वित्त मंत्री इस दृष्टिकोण से इस समस्या पर विचार करें ।

श्री सी० डी० देशमुख: हम खण्ड १२ पर विचार कर रहे हैं और मुझे यह बात समझ में नहीं आती कि यहां यह प्रश्न कैसे उत्पन्न होता है ।

श्री तुलसी दास : मुझे खेद है कि मैं खण्ड १३ पर बोलने लगा जिस से मेरे अगले संशोधन का सम्बन्ध है ।

खण्ड १२ (ग) के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि कानून के अनुसार कोई मालिक अपने नौकर से वेतन में से आयकर की राशि काट सकता है परन्तु यदि वह उस राशि का भुगतान सरकार को न करे तब भी जिम्मेदारी नौकर की ही है । मुझे इस में कोई तुक दिखाई नहीं देती ।

वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री (श्री टी० टी० कृष्णमाचारी) : यह तो कानून की सीधी सी बात है, तर्क का तो सवाल ही नहीं ।

श्री तुलसी दास : इन के लिए होगी, मुझे तो ऐसा लगता है कि हम कर्मचारी के साथ कड़ाई बर्त रहे हैं ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : कर्मचारी की रक्षा के लिए एक अन्य धारा है ।

श्री टी० एन० सिंह : मरा विचार है कि मेरे माननीय मित्र श्री तुलसीदास ने जो प्रश्न उठाया है उस पर उचित रूप से विचार करने के लिए हमें यह मालूम होना चाहिए कि जब करदाता पर कर लगता है और वह कर की राशि को गलत बताता है तो सारा मामला तीन चार साल तक चलता रहता है और वह केवल वही राशि देता है जिस के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं है ।

जहां तक मालिक द्वारा अपने कर्मचारी का आय-कर उस के वेतन में से काट लेने का सम्बन्ध है मुझे कर्मचारी से इसलिए सहानुभूति है कि वह तो मालिक को सरकार का एजंट समझ कर कर दे देता है । मालिक वह राशि सरकार को न दे तब भी कर्मचारी ही को जिम्मेदार क्यों समझा जाय ?

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : आप को इस के विस्तार में जाने का कष्ट नहीं करना चाहिए क्योंकि धारा ७ के परन्तुक में इस का उपबन्ध है ।

श्री तुलसीदास : आप खण्ड १२ (ग) पढ़िए तो उस से स्पष्ट है कि यदि मालिक कर्मचारी के आयकर की राशि सरकार को न दे तो कर्मचारी ही जिम्मेदार होगा, यद्यपि उस के वेतन से वह राशि काट ली गई है ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : संभवतः उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया है कि यह सरकार तथा सेवायोजक के बीच का मामला है; ऐसा सेवायोजक जो खाते में दिखा देता है परन्तु वास्तव में भुगतान नहीं करता है उसको इस कटौती का लाभ नहीं मिलता है परन्तु जहां तक कर्मचारी का सम्बन्ध है उस के लिये धारा ७ का एक परन्तुक है जो इस प्रकार है :—

"शर्त यह है कि जहां धारा १८ के अनुसार कर धनराशि में से काट लिया जा सकता है, कर दाता से इस कर का स्वयं भुगतान करने को नहा कहा जायगा केवल उस दशा के जिसमें उस को वेतन बिना किसी कटौती के दिया गया है ।"

इस संशोधन का उद्देश्य केवल इतना है कि ऐसा सेवायोजक जो बेईमानी से केन्द्रीय सरकार को भुगतान नहीं करता है परन्तु उस ने केवल खाते में कटौती दिखा दी है उस को इस प्रकार की कटौती का कोई लाभ न मिले ।

उपाध्यक्ष महोदय : क्या श्री तुलसीदास चाहते हैं कि मैं उन के संशोधन पर मतदान लूं ?

श्री तुलसीदास : नहीं श्रीमान्, मैं उसे वापस लेने की अनुमति चाहता हूं ।

उक्त संशोधन सदन की अनुमति से वापस ले लिया गया ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है कि :

खण्ड १२ विधेयक का अंग बना लिया जाय ।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड १२ विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड १३—धारा १८ (क) का संशोधन इत्यादि

श्री तुलसीदास : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ २६ व २७ में,

पंक्ति ४४ से ४८ तक तथा पंक्ति १ से ९ तक हटा दी जाय ।

मैं पिछले खण्ड के वाद विवाद के समय भूल से इस खंड पर व्याख्यान दे गया ।

उपाध्यक्ष महोदय : यदि वे चाहें तो मैं रिपोर्टर से कह दूंगा कि वे आप का व्याख्यान उस स्थान से हटा कर इस स्थान पर कर दें ।

श्री तुलसीदास : नहीं श्रीमान्, मैं कुछ शब्दों में समझा दूंगा । वित्त मंत्री ने बताया था कि उन के विभाग में कर निर्धारण की रीति को बदलने पर विचार किया जा रहा है । उन्होंने इंगलिस्तान का उदाहरण दिया और बताया कि वहां केवल चालू वर्ग की आय पर कर लिया जाता है । आयकर जांच आयोग ने सिफारिश की है कि पूर्वकालिक भुगतान के सूद की दर बढ़ा दी जाय । यह सिफ़ारिश केवल इस दृष्टिकोण से नहीं की गई है कि आय पर कर-निर्धारण चालूवर्ष की आय के आधार पर किया जाय या गतवर्ष की आय के आधार पर परन्तु इस का कारण अनेक कर-निर्धारणों का देर से किया जाना है । एक बार धारा १८ (क) के अनुसार पूर्वकालिक भुगतान द्वारा कर का भुगतान हो जाने पर विभाग का ढंग ऐसा है कि वे कर निर्धारण के सम्बन्ध में बेफिक्र हो जाते हैं । यदि सूद लगाया जाय तो उस के कारण विभाग चौकन्ना रहेगा जिस से कर निर्धारण समाप्त होने पर शीघ्र से शीघ्र करदाता को ज्ञात हो जाय कि कर निर्धारण क्या है तथा उसकी उत्तरवादिता कितनी है । जांच आयोग ने तो ब्याज की दर बढ़ाने की सिफ़ारिश की है परन्तु कम से कम ब्याज की दर को बनाये रक्खा जाय ।

श्री सी० डी० देशमुख : मैं ने सारी परिस्थिति की विस्तारपूर्ण व्याख्या की है । जहां तक वेतन भोगी का सम्बन्ध है उस को इस प्रकार का कोई लाभ नहीं मिलता है । कोई कारण नहीं है कि किसी अन्य व्यक्ति को यही लाभ क्यों दिया जाय ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है कि :

पृष्ठ २६ तथा २७ में,

पंक्तियां ४४ से ४८ तक तथा पंक्तियां १ से ९ तक हटा दी जायें ।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड १३ विधेयक का अंग बनाया जाय"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ

खण्ड १३ विधेयक का अंग बनाया गया ।

खण्ड १४ विधेयक का अंग बनाया गया ।

खण्ड १५–(धारा २४ का संशोधन इत्यादि)

श्री सी० डी० देशमुख : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ २८ पंक्ति १६ में,

'स्थानापन्न किया गया' के बाद बढ़ाया जाय,

'"इस प्रकार प्रस्थान नहीं किया गया भाग" शब्दों के स्थान पर शब्द "हानि की वह मात्रा जिस का इस प्रकार प्रतिसादन नहीं किया गया है या सम्पूर्ण हानि जहां करदाता के पास आय का कोई अन्य शीर्षक न हो" स्थानापन्न किये जायेंगे ।'

एंगलोफ्रेंच टेक्सटाईल कम्पनी के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में कही गई कुछ बातों के कारण यह संशोधन आवश्यक हो गया है । विचार यह किया गया था कि अग्रनयन केवल उसी दशा में ग्राह्य होगा जब कि कर दाता नें पहले वर्ष में उसे किसी अन्य शीर्षक की हानि के साथ प्रतिसादित किया हो । करनिर्धारण करदाता के पक्ष में है तथा चूंकि मैं पहले इसका औचित्य अपने व्याख्यान में दे चुका हूं इसलिए अब

में इस सदन से इस संशोधन की सिफ़ारिश करता हूं ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है

पृष्ठ २८ पंक्ति १६ में,

'स्थानापन्न किया गया' के पश्चात बढ़ाया जाय :

'"वह भाग जो इस प्रकार प्रतिसादित नहीं किया गया" शब्दों के स्थान पर, शब्द "हानि की वह मात्रा, जिस का इस प्रकार प्रतिसादन नहीं किया गया है या सम्पूर्ण हानि जहां कर दाता के पास आय का कोई अन्य शीर्षक न हो" स्थानापन्न किये जायेंगे ।'

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड १५, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बना लिया जाय ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड १५, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बना लिया गया

खण्ड १६ तथा १७ विधेयक के अंग बना लिये गये ।

खण्ड १८—(धारा ३४ के संशोधन इत्यादि)

संशोधन किया गया ।

पृष्ट २८ में,

(१) पंक्ति ४५ में 'हटा दिया जायगा' के पश्चात् जोड़ा जाय :

' "६६ और" अंक तथा शब्द के स्थान पर अंक तथा शब्द "६६ या" स्थानापन्न किये जायें '

(२) पंक्ति ४७ में,

शब्द 'धारा' के थान पर स्थानापन्न किये जायें :

' शब्द "उस अवधि को सीमित करने वाली धारा, जिसके अन्दर कोई उपाय किया जाय या कोई आदेश, करनिर्धारण, या पुनः करनिर्धारण किये जायें" '

—[श्री पाटस्कर]

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि खण्ड १८, संशोधित रूप म विधेयक का अंग बना लिया जाय ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड १८, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बना लिया गया ।

खण्ड १९ से ३१ तक विधेयक के अंग बना लिये गये ।

खण्ड १, नाम तथा अधिनियमन सूत्र, विधेयक का अंग बना लिया गया ।

श्री सी० डी० देशमुख : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि विधेयक, संशोधित रूप में, पारित किया जाय ।"

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि विधेयक, संशोधित रूप में, पारित किया जाय ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

चलचित्र (संशोधन) विधेयक

वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री (श्री टी० टी० कृष्णमाचारी) : श्रीमान्, यदि आप मुझे अनुमति देने की कृपा करें तो मैं, अपने सहयोगी डा० केसकर की ओर से, उन के नाम का प्रस्ताव रखना चाहता हूं ।

मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि चलचित्र अधिनियम, १९५२, के संशोधन करने वाले विधेयक पर विचार आरम्भ किया जाय ।"

यह बहुत स्पष्ट विधेयक है । चलचित्र अधिनियम, १९५२ के वास्तविक प्रशासन के सम्बन्ध में जिस के द्वारा १९१८ के अधि-

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

नियम के उपबन्ध पुनः अधिनियमित किये गये थे, कुछ दोष पाये गये जिन का नाता चलचित्रों के प्रदर्शन के लिये संमोदन से था। अधिनियम की धारा ६ के परन्तुक के अन्तर्गत एक सूचना निकाली जाती है कि फिल्म केन्द्रीय सरकार द्वारा अप्रमाणित क्यों न घोषित की जाय। यह परन्तुक बेकार है तथा कार्य में समय नष्ट करता है तथा इस को हटा देना चाहिये। कई बार देखा गया है कि ऐसे चलचित्र प्रदर्शित किये गये हैं जिन के कुछ भाग चलचित्र नियंत्रण केन्द्रीय परिषद द्वारा पारित नहीं किये गये हैं। प्रमाणित चलचित्रों में इस प्रकार के हेरफेर को रोकने के लिये दण्ड के खण्ड की पुनः रचना की गई है जिस के दण्ड को बढ़ाने का प्रस्ताव किया गया है।

इस विधेयक के उपबन्ध सिद्धान्त में कोई परिवर्तन नहीं करते हैं केवल प्रक्रिया में परिवर्तन करते हैं।

श्री एस० सी० देव (कचार लुशाई पहाड़ियां) : औचित्य प्रश्न, श्रीमान्।

उपाध्यक्ष महोदय : औचित्य प्रश्न क्या है ?

श्री एस० सी० देव : क्या यह विधेयक कार्यक्रम पत्र में था ?

उपाध्यक्ष महोदय : यह विधेयक कार्यक्रम पत्र में है। संभवतः माननीय सदस्य ने कार्यक्रम पत्र को देखा नहीं है। अब से माननीय सदस्य, कृपा कर के, कार्यक्रम पत्र को देख लिया करें तथा अधिक सावधानी बरतें।

श्री पुन्नूस : कार्यक्रम मंत्रणा समिति द्वारा संमोदित तालिका में यह विधेयक नहीं है।

उपाध्यक्ष महोदय : ऐसे छोटे छोटे विधेयकों के कार्यक्रम मंत्रणा परिषद में जाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

प्रस्ताव किया गया :

"कि चलचित्र अधिनियम, १९५२ को संशोधित करने वाले अधिनियम पर विचार आरंभ किया जाय।"

श्री कासली वाल (कोटा-झालावाड़) : मैं ने यह विधेयक ध्यान से पढ़ा है। इसका उद्देश्य उन व्यक्तियों को चौदह दिन का समय देना है जिन को प्रमाण पत्र दिया जाता है। यह ऐसा अधिकार है जिस का अधिनियम में होना बहुत आवश्यक है। यदि किसी का प्रमाण पत्र 'यू' से 'ए' में बदला जाय तो भी यह अधिकार अवश्य होना चाहिये। माननीय मंत्री ने भी एक संशोधन की सूचना दी है जिसका उद्देश्य यह है कि किसी चल चित्र को अप्रमाणित घोषित करने पर उस सम्बन्ध में सारी शक्ति सरकार को दी जाय। ऐसी सूरत में भी एक महीने के अन्दर सूचना का दिया जाना आवश्यक है।

श्री पुन्नूस : इस समय इस विधेयक पर विचार करने में कुछ अड़चनें हैं। बहुत आवश्यक विधेयक सदन के सामने रक्खे गये हैं तथा हम इस विधेयक का अध्ययन नहीं कर सके हैं। न संशोधन रखने का समय है।

उपाध्यक्ष महोदय : यह तो सदन के विचार करने की बात है। मैं तो केवल इतना बता सकता हूं कि श्री खूबचन्द सोधिया ने संशोधन की सूचना दी है तथा मंत्री महोदय ने एक संशोधन की सूचना दी है।

श्री राघवाचारी (पेनुकोडा) : पहले दिन जब यह विधेयक कार्यक्रम पत्र में रक्खा

गया था, प्रश्न किया गया था तथा उपाध्यक्ष महोदय ने यह बताने की कृपा की थी कि केवल उन्हीं विधेयकों पर विचार किया जायगा जिन की कार्यक्रम मंत्रणा परिषद् ने सिफ़ारिश की है। अतः हम तैय्यार नहीं हैं। माननीय मंत्री भी यहां नहीं हैं। वे भी इसी विचार में हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : मैं ने सारे प्रश्न सुन लिये। जहां कार्यक्रम मंत्रणा परिषद् के कार्यों का प्रश्न है माननीय सदस्यों ने उन को समझने में बहुत भूल की है। इस प्रकार के साधारण तथा छोटे छोटे विधेयक कार्यक्रम मंत्रणा परिषद् के पास नहीं भेजे जाते। ऐसे विधेयक तो सदा ही रहेंगे। हमारे पास कुछ तो औचित्य होना चाहिये कि हम कार्य कर रहे हैं। यह नहीं हो सकता कि हम यहां आवें और चले जायें। दूसरे माननीय सदस्यों ने संशोधनों की सूचना दी है। वे हमारे सामने हैं। यह विधेयक कार्यक्रम पत्र में हैं इस लिये मैं यह विचार नहीं करता हूं कि कोई भी माननीय सदस्य इस पर बोलने को तैय्यार न होंगे। अब मैं विधेयक के खंडों को लूंगा।

श्री राघवाचारी : सदन में दिये गये आश्वासन तथा व्याख्यान से हम समझे थे...

उपाध्यक्ष महोदय : कोई ऐसा आश्वासन नहीं दिया गया था कि अन्य कार्य नहीं किया जायगा या अन्य छोटे छोटे विधेयकों पर जो बिल्कुल उपरिक (फ़ारमल) हैं विचार नहीं किया जायगा। यह विधेयक कार्यक्रम पत्र में है। माननीय मंत्री को हो सकता है कोई अन्य कार्य हो। कोई भी सदस्य बोल सकता है।

श्री के० के० बसु (डायमंड हार्बर) : क्या हम अब एक एक खण्ड पर विचार कर रहे हैं ?

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : कहा गया है कि एक पखवारे तक कार्यवाही नहीं करना चाहिये। बात यह है कि जब आप अनुभव करते हैं कि चित्र के एक भाग में कोइ दोष है तथा उसे अप्रमाणत घोषित करना है तो एक पखवारे तक चित्र को प्रदर्शित करने देने मे क्या तर्क हो सकता है मर समझ में नहीं आता। धारा ६ को संशोधित किया जा रहा है जिस में एक उपखण्ड (ग) जोड़ा जायगा। जो प्रावधान करता है कि ऐसा कोई भी दो मास से अधिक तक संचालित नहीं रह सकता जिस क अन्दर यह व्यक्ति अपना दृष्टिकोण बता सकत हैं। उस सुनने के बाद अधसूचना में संशोधन किया जा सकता है, उस शुद्ध किया जा सकता है; उस वापस लिया जा सकता है या यह निर्णय किया जा सकता है कि यह अधसूचना संचालित रह। इस प्रकार पुनावलोकन का प्रबन्ध संशोधन द्वारा कर दिया गया है। यदि कार्यवाही क पूर्व अपना दृष्टिकोण बताने क लिए समय निर्धारित कर दिया तो वही शरारत होती रहेगी जो की जा चुकी है।

श्री टी० के० चौधरी (बरहामपुर) : हम ने माननीय मंत्री की बात सुनी परन्तु इन संशोधनों का सम्बन्ध है.....

उपाध्यक्ष महोदय : अभी मैं संशोधनों पर नहीं पहुंचा हूं।

श्री नम्बियार : कुछ अंश नियंत्रण परिषद् के संमोदन बिना प्रदर्शित किये जाते हैं। क्या इस के कारण सारा प्रदर्शन बन्द कर दिया जायगा।

उपाध्यक्ष महोदय : तो किया ही क्या जा सकता है ?

श्री टी० के० चौधरी : श्रीमान्, यह बात याद रखने की है कि चित्र प्रादेशिक

[श्री टी० के० चौधरी]

नियंत्रण परिषद् द्वारा पारित किया जा चुका है । उस के पश्चात् सरकार चित्र को अप्रमाणित करना चाहती है । जब एक पक्ष जो योग्य है सारे चित्र की जांच कर चुका है तो जिस के व्यक्ति को हानि होगी उस को भी एक अवसर दिया जाना चाहिये । दो मास का समय जो दिया गया है वह वास्तव में प्रतिवेदन करने का प्रावधान नहीं है । सरकार को अधिकार प्राप्त है कि अपने मन से अपने निर्णय का पुनर्विलोकन करे इसका स्पष्ट प्रावधान कहां है जिस के द्वारा कोई व्यक्ति सरकार के सामने प्रतिवेदन भेज सकता है या उस के विरुद्ध पुनर्वाद भेज सकता है? इस का कोई प्रावधान नहीं है ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : यह सब बात इस कारण उठी है कि प्रायः ऐसा होता है कि ऐसी कुछ बात सेंसर के ध्यान में नहीं आती हैं । कोई अंश विशेष बहुत सारी गड़बड़ पैदा कर सकता है और जनता की भावना को ठेस पहुंच सकती है । ठेस लगने का पता चलने पर फिल्म को चलने देने से वह चोट बढ़ती ही है, अतः तुरन्त कार्यवाही आवश्यक हो जाती है । ऐसी तुरन्त कार्यवाही के अवसर पर यह बहाना नहीं किया जा सकता कि कुछ लोगों को असुविधा होगी । जिनको चोट पहुंची है, वे दूसरे लोग भी तो परेशान हो रहे हैं । यह इन प्रश्नों के संतुलन की बात है । आप सरकार से यह आशा नहीं कर सकते कि वह इन सब कारणों पर ध्यान दिए बिना या यह सोचे बिना कि सरकारी कार्यवाही की प्रत्यक्ष आवश्यकता है या नहीं आदेश निकाल दे । यदि सरकार समझती है कि कार्यवाही तुरन्त होनी चाहिए, तो आप पन्द्रह दिन का समय संबंधित दल के अभ्यावेदन की प्रतीक्षा में बरबाद नहीं कर सकते । इस बीच बहुत सारी हानि होती रहेगी । मूल बात यह है कि कुछ बात सेंसर बोर्ड के ध्यान में नहीं आई है । मैं उन सभी दशाओं की बात अभी से नहीं सोच सकता, जिन में सरकारी कार्यवाही आवश्यक होगी । यदि वह हो सकता तो हम सारी बातें विधेयक में गिना देते । संभव है जनता के किसी वर्ग के ऊपर कुछ व्यंग का कटाक्ष हो, जिस पर सेंसर बोर्ड ने ध्यान न दिया हो । ऐसे ही मामलों में नई बातों के प्रकाश में आने पर और तुरन्त कार्यवाही आवश्यक होने पर ही सरकार कार्यवाही करना चाहती है । सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले पक्षों का प्रश्न छोड़ नहीं दिया गया है, वह उस संशोधन में है, जो मैं अध्यक्ष की अनुमति से प्रस्तुत कर दूंगा । अतः वह हानि स्थायी नहीं होगी, यदि वह अनजाने या सरकार को सब बात बताए बिना ही हो गई होगी । आदेश दो महीने में वापस ले लिया जाएगा—दो महीने की यह बाहरी सीमा है । हो सकता है, यह पन्द्रह दिन में ही हो जाए । सदन यह बात निहित स्वार्थों के ऊपर छोड़ दे, जो बड़े शक्तिशाली हैं और सरकार द्वारा कुछ गड़बड़ हो जाने पर प्रेस आदि द्वारा प्रचार कर के जनता का ध्यान उसकी ओर आकर्षित करेंगे । प्रति दिन सरकार पर आक्षेप किए जाते हैं और जनता यह जानती है । यदि सरकार का ध्यान आकर्षित किया गया, तो दो महीने क्या पन्द्रह दिन या एक सप्ताह में उक्त आदेश को वापस ले लिया जाएगा । अतः उस स्थिति को विचार लिया गया है । जब तक हम यह न कहें कि सरकार चुप बैठ कर दूसरे पक्ष को ऐसी हानि पहुंचने दे, जो सेंसर बोर्ड के ध्यान में न पड़ने के कारण पहुंची है, तब तक मैं नहीं समझता विरोधी दल के माननीय सदस्यों की बात कैसे मानी जा सकती है ।

श्री के० के० बसु (डायमंड हार्बर) : सरकार ने कुछ दिन पहले फिल्म-उद्योग के लिए एक जांच समिति बैठाई थी। आर्थिक पहलू के अतिरिक्त यह उद्योग समुदाय के विकास और शिक्षा में एक बहुत बड़ा भाग लेता है। आज से १०-१२ वर्ष पहले की तुलना में वर्तमान भारतीय फिल्मों का स्तर बहुत गिर गया है। आशा थी कि राष्ट्रीय सरकार हमारे समुदाय के सामाजिक ढांचे में स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क के विकास के लिए इस माध्यम का उपयोग करेगी, पर आज जनसाधारण की हलकी भावनाओं को उत्तेजित करने वाले फिल्म ही अधिक बन रहे हैं और १६-१७ वर्ष से भी कम आयु के बच्चों को भी ऐसे फिल्म देखने को मिलते ह, जो उन के मस्तिष्क पर उलटा प्रभाव डालते हैं। युद्ध के बाद अमरीका से प्रभावित डाकुओं वाले फिल्म सब जगह बन रहे हैं। सरकार ने उनको रोकने के लिए कुछ नहीं किया है, उलटे हमारी राष्ट्रीय भावनाओं और घटनाओं का भ्रामक चित्रण करने वाले अमरीका आदि के फिल्म राज्यों के विशिष्ट अधिकारियों या राज्यपालों के समर्थन के साथ प्रदर्शित किए जा रहे हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : सिनेमा के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है, पर यह संक्षिप्त संशोधन विधेयक ही है। प्रस्तुत प्रसंग यही है कि सेंसर बोर्ड के ध्यान से निकल जाने वाली समुदाय विशेष को ठेस पहुंचाने वाली किसी बात का पता चलने पर संबंधित लोगों को स्पष्टीकरण का अवसर दिया जाए या नहीं और सरकार का विचार है कि तुरन्त कार्यवाही न करने पर सब व्यर्थ हो जाएगा, और साथ ही वह एक संशोधन द्वारा फिल्म निर्देशक को हानि न पहुंचाने और शीघ्र निर्णय कराने की दृष्टि में इस समय को दो महीने का बना देना चाहती है।

श्री टी० के० चौधरी : उस संशोधन को देखने से पता चलेगा कि सरकार ने उस पर उचित ध्यान नहीं दिया है।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : संशोधन सामने आने पर चर्चा हो सकेगी।

उपाध्यक्ष महोदय : संशोधन सामने आने पर हम उस पर विचार कर लेंगे। मैं चर्चा के क्षेत्र को सीमित रखना चाहूंगा।

श्री के० के० बसु : फिल्म-जांच समिति की दृष्टि में हम समझते थे कि सरकार एक विस्तृत विधेयक प्रस्तुत करेगी, पर वह नहीं हुआ। सेंसर के साथ ही मैं एक बात पर और बल दूंगा कि सेंसर बोर्ड का कार्य ऐसा नहीं रहा है, जिस से फिल्मों का स्वस्थ विकास हुआ होता। १९४२ से संबंधित एक बंगाली फिल्म बंगाल और देश के कुछ भागों को छोड़ कर शेष देश में दिखाई गई थी। शरच्चन्द्र के एक उपन्यास पर आधारित फिल्म में माता द्वारा बच्चे के माथे के चुम्बन के दृश्य को अनैतिक समझ कर सेंसर बोर्ड द्वारा निकाल दिया गया था। ऐसे सेंसर में आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि हमारे राष्ट्रीय चरित्र विकास में फिल्मों के योगदान की दृष्टि से भी उल्टा प्रभाव पड़ेगा। सुना है, यद्यपि सेंसर-बोर्ड के सभापति उच्च-न्यायालय के एक भूतपूर्व न्यायाधीश हैं, वास्तविक सेंसर पुलिस के एक अधिकारी और उसके एक साथी द्वारा प्रांतीय बोर्ड के सभापति के नाते की जाती है और उसके विरुद्ध अपील नहीं हो सकती। विधि-व्यवस्था रखने में दक्ष एक अधिकारी फिल्म की कलानुभूति को नहीं समझ सकता। संभव है, जलियानवाला बाग से संबंधित एक फिल्म बंगाल में तो प्रदर्शित हो सके, पर पंजाब में बोर्ड में पुलिस

[श्री के० के० बसु]

अधिकारी के सभापति होने के कारण प्रदर्शित न हो सके । अतः सरकार से मेरा अनुरोध है कि सेंसर-बोर्ड का उपयोग देश और समाज के विकास की दृष्टि से किया जाए, जिससे वह नई पीढ़ी को सुशिक्षित बना सके। जब तक सरकार यह आश्वासन नहीं देती, हम समझेंगे कि वह अपने पूर्ववर्तियों की ही चालों का अनुसरण करना चाहती है ।

श्री पुन्नूस (अल्लेप्पी) : संबंधित लोगों को अवसर न देकर सरकार द्वारा तुरन्त कार्यवाही होने पर व्यापार पर बुरा प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि फिल्म भारी लागत पर तैयार होती है और थ्येटर मालिक छोटी सी पूंजी लगाने वाला होता है । सहसा कार्यवाही होने पर बुरा प्रभाव पड़े बिना न रहेगा । दूसरे मैं चाहता हूं कि विधेयक पारित होने से पहले इस समस्या पर पूरा ध्यान दिया जाए । हमारे यहां एक नाटक "तुमने मुझे साम्यवादी बनाया" कुछ जिला मजिस्ट्रेटों की आज्ञा से प्रदर्शित हुआ और लाखों लोगों ने उसे देखा । बाद में राजनीतिक तत्वों के प्रभावित हो जाने से एक जिला मजिस्ट्रेट ने उस पर रोक लगा दी तथा राज्य विधान सभा तक में इस की चर्चा हुई । अतः इस उपबंध में पक्षपाती पदाधिकारियों द्वारा हस्तक्षेप होने का खतरा है । और अब तो संबंधित व्यक्तियों को स्पष्टीकरण का अवसर देने वाला उपबन्ध भी हटाया जा रहा है ।

फिर सरकार कहती है कि सेंसर के बाद परिवर्तन कर के कुछ अंश बढ़ा दिए जाते हैं, पर व्यापार तथा दर्शकों की रुचि की दृष्टि से वह आवश्यक हो जाता है और सरकार को हस्तक्षेप कर के वह अधिकार छीन न लेना चाहिए ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी: जहां तक श्री बसु द्वारा उठाई गई साधारण प्रकार की बातों का संबंध है, मैं समझता हूं कि माननीय मंत्री एक विशद अधिनियम बनाना वांछनीय होने पर तथा विद्यमान अधिनियम की समीक्षा के समय उन पर ध्यान देंगे ।

सरकारी कार्यवाही के विषय में साधारणतः कही गई बातों के विषय में मैं कुछ विवरण दे सकता हूं ; सरकार इस विषय में सक्रिय रही है । वस्तुतः अधिनियम पारित होने के बाद से दस मामले ऐसे हुए हैं, जिनमें फिल्मों को अप्रमाणित किया गया है या 'यू' प्रमाणपत्र को बदल कर 'ए' कर दिया गया है; और ग्यारह मामलों में धारा (५) की उपधारा (४) के अधीन कार्यवाही की गई है तथा प्रमाणीकरण के बाद ११ फिल्मों का पुनः परीक्षण किया गया है । प्रदर्शकों पर अभियोग चलाया गया था, पर अधिनियम में ढील होने के कारण वे छूट गए । दूसरों में कार्यवाही की जा रही है या निर्देशकों को उचित बर्ताव करने के लिए चेतावनी दी जा रही है, अथवा न्यायालय में मामला चल रहा है । अतः वस्तुतः सरकार द्वारा हस्तक्षेप के मामले अधिक नहीं हुए हैं और जहां भी हस्तक्षेप किया गया है, केवल इसी बात को दृष्टि में रख कर किया गया है कि फिल्म-प्रदर्शकों को असुविधा न हो और सार्वजनिक नैतिकता के सम्बन्ध में सरकार के उत्तरदायित्व के अधीन रहते हुए भी उन को पूरी-पूरी स्वतंत्रता दी जाए ।

अतः ये आरोप कि सरकार अपनी शक्ति का दुरुपयोग करेगी, तथ्यों पर आधारित नहीं है, बल्कि कुछ आगे चल कर पैदा होने वाली या कभी पैदा न होने वाली ऐसी आत्मकल्पना पर आधारित है, जिस के लिए विधान द्वारा कुछ प्रावधान नहीं किया जा सकता ।

श्री बसु द्वारा बताई गई एक विशेष फिल्म बंगाल के पुराने प्रांतीय बोर्ड द्वारा अस्वीकृत कर दी गई थी, पर उसे बम्बई बोर्ड द्वारा बाद में स्वीकृत कर लिया गया और बाद में बने केन्द्रीय सेंसर बोर्ड द्वारा उसे पूरे भारत में प्रदर्शन के लिए स्वीकृत कर लिया गया। अतः माननीय सदस्य की दृष्टि में बंगाल बोर्ड द्वारा की गई गलती को बाद में सुधार लिया गया। पर हम सब के प्रमाप एक से नहीं होते, वे विभिन्न होते हैं। माननीय सदस्य नई पीढ़ी के विशेषाधिकारों की रक्षा चाहते हैं, वही हम चाहते हैं। यह सब इसी बात पर निर्भर है कि वह नई पीढ़ी के लिए क्या उचित समझते हैं और हम क्या उचित समझते हैं। उनके और हमारे इस विषयक दृष्टिकोण में मौलिक मतभेद हो सकता है। उस विषय में कोई उभयसाधारण आधार नहीं हो सकता, क्योंकि वह एक विशेष प्रकार का प्रचार उन के लिये उचित समझेंगे और हम जहां तक नई पीढ़ी का संबंध है, उस प्रकार के प्रचार को दूर रखना चाहेंगे। अतः यह ऐसी नीति का प्रश्न है, जिसमें मतभेद की पूरी गुंजाइश है और मतभेद है। सरकारी कार्यवाही पर होने वाली ये आलोचनाएं सरकार की ही आलोचनाएं होंगी और सरकार केवल नीति के ही आधार पर अपने कार्य को उचित ठहरा सकती है। अस्तु, सरकार के ध्यान में ऐसी कोई बात नहीं लाई गई है जिस में सरकार ने नई पीढ़ी के भावी कल्याण के लिये बाधक कोई कार्य किया हो। मैं नहीं समझता कि इस अवसर पर मुझे इस विषय पर और कुछ कहना है या सरकार के और कुछ कहने की आशा की जा रही है।

श्री के० के० बसु : प्रांतीय बोर्डों में अधिकारी ही भरे होते हैं। क्या सरकार उन के दृष्टिकोणों पर बिना ध्यान दिए नैतिकता के प्रमाप आदि के सर्वश्रेष्ठ निर्णायक कुछ असरकारी सदस्यों को भी बोर्डों में रखना चाहती है ?

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य माननीय मंत्री के द्वारा प्रभारी मंत्री तक एक सुझाव पहुंचाना चाहते हैं .....

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं नहीं समझता कि इस छोटे से संशोधन से इसका कुछ संबंध है। बोर्ड में जहां तक मानव-तत्व के लिये जाने का संबंध है, वे सरकारी हों या असरकारी, वे गलती कर सकते हैं और उसी प्रकार की गलती के विरुद्ध ही हम कुछ सुरक्षाएं रखने जा रहे हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : नहीं, वह अधिक संख्या में गैर-पदाधिकारियों को सम्बद्ध करना चाहते हैं। यह माननीय मंत्री जी को बतलाया जा सकता है।

प्रश्न यह है :

"कि चलचित्र अधिनियम १९५ संशोधन करने वाले विधेयक पर विचार किया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खंड २—(धारा ६ इत्यादि का संशोधन)

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं प्रस्ताव करता हूं :

पृष्ठ १ पर, खंड २ के स्थान पर निम्न-लिखित निविष्ट किया जाय :

"2. Amendment of section 6, Act XXXVI of 1952—In section 6 of the Cinematograph Act, 1952 (hereinafter referred to as the principal Act),—

(i) after clause (b) the following new clause shall he added, namely :--

'(c) the exhibition of any film be suspended for such

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

period as may be specified in the direction'; and;

(ii) for the proviso, the following shall be substituted, namely :--

'Provided that no direction issued under clause (c) shall remain in force for more than two months from the date of the notification."]

["२. १९५२ के अधिनियम ३६ की धारा ६ का संशोधन--चलचित्र अधिनियम; १९५२ की धारा ६ में (जो इसमें, आगे से, मुख्य अधिनियम के नाम से निर्दिष्ट किया गया है)—

(१) खंड (ख) के पश्चात, निम्नलिखित नवीन खण्ड जोड़ा जाएगा, नामतः --

'(ग) किसी भी फिल्म का प्रदर्शन, निर्देश में निर्दिष्ट किए गए काल तक के लिये निलम्बित कर दिया जाए';' और

(२) परन्तुक के लिए, निम्नलिखित आदिष्ट किया जाएगा, नामतः —

'बशर्ते कि खंड (ग) के अन्तर्गत जारी किया गया कोई निर्देश, अधिसूचना की तारीख से दो मास से अधिक के लिए प्रवर्तित नहीं रहेगा, "]

जैसा मैंने प्रारम्भ में ही बतलाया, संशोधन की इसलिये आवश्यकता पड़ी कि मूल खंड २ में केवल परन्तुक को ही निरसित करने की अपेक्षा की गई है जिस के अन्तर्गत कि, जहां तक सरकार का सम्बन्ध है, चौदह दिन की पूर्वसूचना आवश्यक है। अब यह किया जा रहा है। मूल अधिनियम में दो उप-धाराएं (क) और (ख) पहले से ही मौजूद हैं और उन्हें वैसे ही रख कर उन में कोई परिवर्तन नहीं किया जा रहा। एक तीसरी उपधारा (ग) के जोड़ने की अपेक्षा की जा रही है, नामतः—

"(ग) किसी भी फिल्म का प्रदर्शन, निदश में निर्दिष्ट किए गये काल तक के लिए निलम्बित कर दिया जाय।"

परन्तुक को बदल दिया गया है जिस से कि उप-धारा (ग) के अन्तर्गत जारी की गई अधिसूचना दो मास से अधिक न चालू रहे। इतना समय, सरकार को इस मामले पर अन्तिम निर्णय से पूर्व, जनता को प्रतिनिधान करने का अवसर देने के लिये आवश्यक है।

उपाध्यक्ष महोदय : संशोधन प्रस्तुत हुआ।

श्री कासलीवाल : यह संशोधन विधेयक के मूल स्वरूप की कठोरता कुछ कम कर देता है। किन्तु यह केवल उप-धारा (ग) पर ही लागू होता है जो कि अब जोड़ी जाएगी। यह उप-धारा (क) और (ख) पर लागू नहीं होता। जहां तक इन उप-धाराओं का सम्बन्ध है, ऐसे व्यक्ति को जिस की फिल्म प्रमाणित घोषित कर के बाद को अप्रमाणित घोषित कर दी गई है, सरकार को प्रतिनिधान करने का कोई अवसर नहीं दिया गया है। यदि माननीय मंत्री जी इस परन्तुक को उप-धारा (क) और (ख) से भी सम्बद्ध कर दें तब स्थिति मुझे अधिक स्वीकार्य होगी।

श्री टी० के० चौधरी : मुझे सरकार से केवल इस बात पर विचार करने के लिये निवेदन करना है। माननीय मंत्री जी द्वारा प्रस्तावित संशोधित रूप में यदि उप-धारा ६ को देखें तो विदित होगा कि, जहां तक

फिल्मों को प्रमाणित करने का प्रश्न है, उन्हें प्रदर्शित करने की शक्ति पर दो मास की सीमा रक्खी गई है। किन्तु फिल्मों के अप्रमाणीकरण पर दो मास की कोई सीमा नहीं है।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : बात इस प्रकार है। जब तक कि सरकार के पास बहुत खास कारण न हों, वह उप-धारा (क) और (ख) के अन्तर्गत कार्यवाही नहीं करेगी और जब वह समझेगी कि कोई आपातिक अवस्था है तभी वह उप-धारा (ग) के अन्तर्गत कार्य करेगी। उप-धारा (क) और (ख) सरकार को मुख्य धारा में उपबन्धित कार्यवाही करने की शक्ति प्रदान करती है, और सरकार उसी प्रकार कार्यवाही करेगी, किन्तु यहां बात यह है कि सरकार लोगों को अपना दृष्टिकोण पेश करने की भी अनुमति देगी। सामान्यतः कार्यवाही उप-धारा ३ के अन्तर्गत की जाएगी, ऐसे मामलों में जहां कि सरकार लोगों को प्रतिनिधान का अवसर नहीं दे सकती है।

श्री टी० के० चौधरी : यदि सरकार की यही मंशा है तो इस परन्तुक को उप-धारा (क) और (ख) के साथ भी मिलाने में क्या आपत्ति है ?

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : वास्तविक स्थिति यह ह। मुख्य मंशा यह थी कि परन्तुक को निरसित कर दिया जाय जिस से कि सरकार किसी फिल्म को अप्रमाणित करने अथवा उसके प्रमाणीकरण का रूप बदलने को मुक्त हो।

उपाध्यक्ष महोदय : किन्तु बिना पूर्व सूचना के ?

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मूल मंशा यही थी बाद में यह पाया गया कि हम दूसरा दृष्टिकोण अपना सकते हैं। उप-धारा (क) और (ख) मौजूद हैं और एक नई उप-धारा (ग) जोड़ दी गई है जो (क) और (ख) का परिवर्तन है। जब तक कि अनिवार्य परिस्थितियां विवश सरकार को उप-धारा (क) और (ख) के अन्तर्गत कार्य करने को मजबूर न करें वह सामान्यतः उप-धारा (ग) के अन्तर्गत ही कार्य करेगी। यह सरकार के लिए निर्धारित करना होगा कि परि-स्थितियां किस उप-धारा के अन्तर्गत कार्य करने की अपेक्षा करती हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : कठिनाई यह प्रतीत होती है कि यह परन्तुक उप-धारा (क) या (ख) को प्रभावित नहीं करता ? क्या यह कुछ कठोर नहीं है ?

क्या यह कुछ अधिक कठोर प्रतीत नहीं होता ? चलचित्र पर धन व्यय करने वाले को यहां कोई पूर्व सूचना नहीं दी जाती। बिना पूर्वसूचना के भी यह एक दम रद्द किया जाता है।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : श्रीमान् मैं बता चुका हूं कि खण्ड २ की मूल स्थिति कि एक पखवारे की पूर्वसूचना दी जायेगी, जैसा कि परन्तुक में कहा गया है, अब लागू न होगी, और यह सरकार पर छोड़ दिया जायगा कि वह अपनी चाहना या विवेक का उपयोग करे। संशोधन के अन्तर्गत अब जो कुछ भी हो रहा है वह यह है कि सरकार के लिए एक वैकल्पिक ढंग अपनाया जाये अर्थात वे उप-धारा (ग) के अन्तर्गत स्थगित कर देंगे। यदि वे धारा (ग) के अन्तर्गत स्थगित करते हैं तो अन्य बात स्वभावतः ही अनुसरण करेगी। स्थगन अनिश्चित नहीं हो सकता। यह किसी निश्चित समय तक सीमित रहना चाहिये अर्थात् २ मास तक। यही कारण है कि परन्तुक केवल किसी स्थगन के सम्बन्ध में ही लागू हो सकता है न कि किसी आदेश के संबंध में जिस का संबंध अप्रमाणीकरण से हो। यदि सरकार को पता लगता है कि उप-धारा (क) या उप-

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

धारा (ख) का ढंग उचित नहीं है तो उप-धारा (ग) का उपयोग होगा ।

उपाध्यक्ष महोदय : परन्तु ऐसा नहीं कहा गया है । यह तो स्वतंत्र है ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं कहता तो हूं कि यह स्वतन्त्र परन्तुक है, परन्तु एक वैकल्पिक परन्तुक । उप-खण्ड (क) या उप-खण्ड (ख) के संबंध में, जैसा भी हो, प्रथम तथा द्वितीय कार्यवाही की अपेक्षा तीसरी कार्यवाही सरकार के लिए खुली है कि वह चलचित्र को अप्रमाणित करने के बजाय केवल प्रमाणीकरण स्थगित कर सकती है और फिर वह व्यक्तियों को अपना मामला प्रस्तुत करने का अवसर देता है । सरकार स्थगन को रद्द कर सकती है या उप-धारा (क) के अन्तर्गत अप्रमाणित कर सकती है या उप-धारा (ख) के अन्तर्गत प्रमाणपत्र का रूप बदल सकती है । यदि सरकार किसी विशेष प्रदर्शन-कर्ता की मांगों को स्वीकार नहीं करती तो उप-धारा (क) या उप-धारा (ख) के अन्तर्गत कार्यवाही होगी । यह उप-धारा (क) या उप-धारा (ख) के अन्तर्गत कार्यवाही का लगभग प्रारम्भ है ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

पृष्ठ १ पर, खण्ड २ को निम्नलिखित से बदल दो :

"२. १९५२ के ३६वें अधिनियम की छटी धारा का संशोधन––चलचित्र अधि-नियम, १९५२ के खण्ड ६ में (इसके उपरान्त जिसका मूल अधिनियम के रूप में निर्देश किया जायेगा),––

(१) धारा (ख) के पश्चात निम्न-लिखित नई धारा जोड़दी जायेगी, नामतः :–

'(ग) किसी चलचित्र का प्रदर्शन उतने काल के लिए स्थगित होगा जितना कि निर्देश में निश्चित किया जायेगा;'; तथा

(२) परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित होगा, नामतः :––

'बशर्ते कि खण्ड (ग) के अन्तर्गत दिया गया कोई निदेश अधिसूचना की तारीख से दो मासों से अधिक समय तक लागू नहीं रहेगा ।"

प्रस्ताव स्वीकार हुआ ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि संशोधित खण्ड २ विधेयक का भाग है ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

संशोधित खंड २ विधेयक में जोड़ा गया ।

खंड ३ और ४ विधेयक में जोड़े गये ।

खंड १ विधेयक में जोड़ा गया ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि विधेयक, संशोधित रूप में, पारित किया जाये ।"

उपाध्यक्ष महोदय : प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ :

"कि विधेयक को, संशोधित रूप में, पारित किया जाये ।

श्री एस० सी० सामन्त (तामलुक) : आज प्रातः मैंने दो संशोधन रखे थे । एक संशोधन द्वारा मैं "छः मासों" को "तीन मासों" से बदलना चाहता था । मंत्रालय से मुझे विदित हुआ है कि वे अपराधी कारावास से बहुत भयभीत हैं और तब तक उन्हें केवल जुरमाना से नहीं रोका जा सकता अतः मैं सन्तुष्ट हूं कि ये ३ मास ठीक रहेंगे । अन्य उपबन्ध जो मैं प्रस्तुत करना चाहता था पहिले ही १९५३ के चलचित्र अधिनियम में सम्मिलित कर दिया गया है ।

१९५२ में जब आप चलचित्र अधिनियम पर विचार कर रहे थे, हमारा मत था कि यह कारावास-खण्ड छोड़ दिया जाये। तब सरकार ने कहा—हमें जुरमाने से अनुभव करने दो और यदि हम देखेंगे कि उन्हें रोकना असम्भव है, हम कारावास का उपबन्ध रखेंगे। हमें प्रसन्नता है कि यह उपबन्ध सम्मिलित कर लिया गया है और मैं आशा करता हूं कि सरकार इस के इस पहलू की देख भाल करेगी, और यदि आवश्यक हुआ तो बाद में और अधिक कठोर उपाय अपनायेगी।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं निश्चय ही माननीय सदस्य की इच्छायें अपने साथियों को बताऊंगा ताकि वे आवश्यक ध्यान दे सकें।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

"कि विधेयक, संशोधित रूप में, पारित किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

अनुसूचित क्षेत्र (विधियों का आत्मसात करना) विधेयक

गृहकार्य तथा राज्य मंत्री (श्री काटजू) : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि अनुसूचित क्षेत्रों में लागू कुछ विधियों को आसाम राज्य के नौगोंग तथा शिवसागर नामी ज़िलों में लागू विधियों के साथ आत्मसात करने के लिए विधेयक, जैसा कि राज्य परिषद ने पारित किया है, विचारार्थ स्वीकार किया जाये।"

[**श्री पटासकर** सभापति पद पर आसीन थे]

यह एक अविवादग्रस्त उपाय है। जैसा कि सदन न लक्ष्य तथा कारणों के विवरण से देखा होगा कि मिकिर पहाड़ियों के कुछ क्षेत्र, जो आसाम में स्वायत्त जिला है और जिसका उल्लेख संविधान की छटी अनुसूची में दिया गया है, उस जिले से निकाल कर पड़ौस के नौगोंग तथा शिवसागर नामी मैदानी ज़िलों में मिला दिये गये हैं। परन्तु इस अपवर्जन, तथा इन मैदानी ज़िलों से मिलाने पर भी वे नियम तथा आनियम तथा अधिसूचनायें, जो मिकिर पहाड़ियों में लागू थीं, अब भी इन क्षेत्रों में लागू हैं यद्यपि ये क्षेत्र अब इन दो मैदानी ज़िलों के भाग बन चुके हैं। इससे बड़ी भारी प्रशासकीय असुविधा उत्पन्न हो गई है, और आसाम सरकार ने उन समस्त नियमों तथा अधिसूचनाओं को रद्द करने तथा नौगोंग और शिवसागर में लागू विधियों तथा आनियमों को इन सम्मिलित क्षेत्रों में लागू करने का प्रस्ताव किया है। आसाम सरकार अपने विधान मण्डल में विधियों को, जो राज्य सूची का भाग हैं, इन क्षेत्रों में लागू करने के लिये उचित पग उठा रही है और उन्होंने हम से भी संघ सूची के संबंध में ऐसे ही पग उठाने की प्रार्थना की है। यह विधेयक उसी प्रार्थना के आधार पर, जो प्रत्यक्षतः युक्तियुक्त तथा उचित है, प्रस्तुत किया गया है। विधेयक का एकमात्र उद्देश्य पहिली अधिसूचनाओं, आनियमों तथा सब प्रकार की बातों से पीछा छुड़ाना और नौगोंग तथा शिवसागर नामी दो मैदानी जिलों में प्रचलित विधियों को सम्मिलित क्षेत्रों में भी लागू करना है।

सभापति महोदय : प्रश्न यह है :

"कि अनुसूचित क्षेत्रों में लागू कुछ विधियों का आसाम राज्य के नौगोंग तथा शिवसागर नामी जिलों में लागू विधेयकों के साथ आत्मसात करने के लिए विधेयक, जैसा कि राज्य परिषद ने पारित किया है, विचारार्थ स्वीकार किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

श्री के० के० बसु (डायमंड हार्बर) : मैं खण्ड ६ के सम्बन्ध में एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। क्या उस विशेष क्षेत्र में लागू होने वाली किसी विधि या विधियों के किसी विशेष वर्ग के अर्थ निर्णय में कोई

[श्री के० के० बसु]

विभ्रम होने पर निर्णय करना केन्द्रीय सरकार पर छोड़ दिया गया है ? खण्ड ६ के अन्तर्गत एसी कठिनाइयों को हल करने के लिए क्या उपबन्ध है ? क्या माननीय मंत्री व्याख्या करने की कृपा करेंगे ?

डा० काटजू : वही साधारण बात है जो इन मामलों में होती है । यदि कोई कठिनाई होती है, तो केन्द्रीय सरकार हस्तक्षेप करती है और स्पष्टीकरण करती है ।

श्री के० के० बसु : समय या अर्थ-निर्णय सम्बन्धी कठिनाई क्या है ?

डा० काटजू : अर्थनिर्णय के सम्बन्ध में कोई कठिनाई नहीं है चाहे यह बात लागू हो अथवा न हो । अर्थ निर्णय तो न्यायालयों के लिए है ।

खण्ड १ से ६ तक, अनुसूची, नाम तथा अधिनियम सूत्र विधेयक में सम्मिलित हुए ।

डा० काटजू : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि विधेयक पारित किया जाय ।"

सभापति महोदय : प्रश्न यह है :

"कि विधेयक पारित किया जाय ।"

प्रस्ताव स्वीकार हुआ ।

भारतीय प्रकाशस्तम्भ (संशोधन) विधेयक

श्री राघवाचारी (पेनुकोंडा) : श्रीमान, मैं फिर यह बात उठाता हूं कि हमारा विचार यह था कि यह विधेयक प्रस्तुत नहीं होगा । न तो हम ने कोई संशोधन रखे हैं और न ही हमारे पास यहां सब प्रलेख आदि हैं ।

सभापति महोदय : यह प्रतीत होता है कि यह विषयसूची में था और इस पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।

विधि तथा अल्पसंख्यक कार्य मन्त्री (श्री बिश्वास) : पिछले विषय के सम्बन्ध में उपाध्यक्ष महोदय ने स्थिति की व्याख्या की थी ।

श्री अलगेशन : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम, १९२७ में और संशोधन करने के लिए विधेयक पर विचार किया जाय ।"

माननीय सदस्य देखेंगे कि यह एक बड़ा सादा तथा अविवादग्रस्त और बड़ा ही हल्का उपाय है । सदन के सम्मुख प्रस्तुत विधेयक प्रकाशस्तम्भ विभाग के संसाधनों के बढ़ाने का बड़ा ही सरल उपाय है । यह विभाग भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम, १९२७, के प्रशासन के लिए उत्तरदायी है, जो केन्द्रीय सरकार का अधिनियम है । प्रकाशस्तम्भ आदि जहाज़रानी में सहायक माने जाते हैं । भारत में प्रकाशस्तम्भ विभाग भारत के पत्तनों को या उन के बीच यात्रा करने वाले जलयानों के लाभ के लिए इन सहायताओं की व्यवस्था या/और बनाये रखने का काम करता है । भयानक क्षेत्रों में ये प्रकाश स्तम्भ स्थित हैं, जहां से जलयानों को अवश्य बचना चाहिए अर्थात मत्स्य कुल, चट्टानें आदि । उचित रूप में सुसज्जित तथा भली प्रकार कार्य करते हुए प्रकाशस्तम्भ इस प्रकार सागर में मानव जीवन तथा सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए बड़ा शक्तिशाली उपाय है ।

भारत में वर्तमान स्थापना के अन्तर्गत प्रकाशस्तम्भ, जो साधारण जहाज़रानी के लिए लाभदायक है, 'साधारण' श्रेणी में रखे जाते हैं और उनके प्रशासन की देख भाल प्रकाशस्तम्भ विभाग द्वारा प्रत्यक्ष रूप में केन्द्र द्वारा की जाती है । भाग ख, ग तथा घ के राज्यों में समस्त जहाज़रानी संबंधी सहायताओं के प्रशासन का उत्तर-दायित्व केन्द्र को सौंप दिया गया है । वे प्रकाशस्तम्भ जो किसी विशेष पत्तन को जाने वाले जलयानों के लिए लाभदायक होते हैं 'स्थानीय' माने जाते हैं और छोटे पत्तनों

में राज्य सरकार तथा बड़े पत्तनों में पत्तन न्यासों द्वारा ठीक स्थिति में रखे जाते हैं ।

यह महसूस किया जाता है कि भारत की प्रकाश-प्रणाली अब बढ़ती हुई जहाज़-रानी की आवश्यकता के अनुकूल होनी चाहिए और मुख्यकर, कच्छ की खाड़ी में प्रकाशव्यवस्था पर, जो भूतपूर्व तटीय रियासतों से निकलकर केन्द्र के हाथ में आ गई है, विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ।

ऐसी ही तथा अन्य सुविधाओं के लिये प्रकाशस्तम्भ इंजीनियरिंग की नवीनतम खोजों को ध्यान में रख कर विभिन्न प्रकाशस्तम्भों के नवीकरण तथा विकास का एक कार्यक्रम बनाया गया है जिसे पूरा करने में १९५५-५६ में लगभग दो करोड़ रुपये की लागत का आगणन किया गया है । इसका उद्देश्य भारतीय समुद्र में नौ परिवहन को पहले से अधिक सुरक्षित बनाना तथा कांडला की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है जिसे एक बड़े बन्दरगाह का रूप दिया जा रहा है ।

प्रकाशस्तम्भ विभाग आत्मनिर्भरता के आधार पर संचालित है तथा आय जहाज़ों पर प्रकाश-शुल्क द्वारा प्राप्त की जाती है । वर्तमान दर वाष्प-संचालित जहाजों के लिये प्रति टन १½ आना है तथा अन्य जहाजों के लिये आधा आना प्रति टन है । खर्चा निकालने के बाद जो न्यूनता तथा आधिक्य होता है उस को सामान्य संचित निधि के नाम के एक कोष से समायोजित कर लिया जाता है । एक और कोष टूट फूट संचित निधि के नाम से है जिस में प्रति वर्ष प्रकाशस्तम्भ विभाग की विभिन्न सामग्रियों के टूट फूट की धनराशियां स्थानान्तरित कर दी जाती हैं । दोनों कोषों का अन्तर—लगभग ८५ लाख रुपया—अगणित व्यय को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है । अतः प्रकाश-शुल्क को बढ़ाना आवश्यक है । भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम में निर्धारित सीमा दो आना प्रति टन है परन्तु आवश्यकता इसे बढ़ा कर चार आने प्रति टन करने की है । केन्द्रीय प्रकाशस्तभ मंत्रणा समिति, जो अनुविहित संस्था है तथा जिस में मुख्य नौपरिवहन सम्बन्धी तथा वाणिज्य हितों के प्रतिनिधि हैं, इस सीमा को बढ़ा कर चार आना कर देने से सहमत हैं । अतः भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम १९२७ के धारा १० (१) में थोड़ा संशोधन करना आवश्यक है । १९५० में एक अधिसूचना निकाल कर यह अधिनियम 'ख' खण्ड के राज्यों में भी लागू कर दिया गया है तथा इसी के अनुसार इस अधिनियम की धारा १ को भी बदलना आवश्यक है । इन दोनों कार्यों को पूरा करने के लिये यह विधेयक लाया गया है । इन शब्दों के साथ मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूं ।

सभापति महोदय : प्रस्ताव यह है :

"कि भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम १९२७ को संशोधित करने वाले विधेयक पर विचार किया जाये ।"

श्री कास्लीवाल (कोटा-झालवाड़) : माननीय मंत्री ने स्वयं अपने व्याख्यान में कहा है कि नौपरिवहन की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के कारण एक अन्य विधेयक लाना पड़ेगा । इसलिए मेरी इच्छा थी कि १९२७ के अधिनियम में यह छोटा सा संशोधन करने के स्थान पर एक और व्यापक विधेयक लाया जाय ।

इसके अतिरिक्त एक बात और है जिस की ओर मैं ध्यान दिलाना चाहता हूं । मैं ने भारत के सारे तट की यात्रा की है तथा मैं ने अपने प्रकाशस्तम्भों की दशा देखी है । मैं कह सकता हूं कि उन में से अनेक ऐसे हैं जिन की दशा अच्छी नहीं है तथा वे जो यह प्रकाशस्तम्भों की देखभाल करते हैं,

[श्री कास्लीवाल]

उन की भी दशा अच्छी नहीं है। मेरा विचार है कि माननीय मंत्री एक पुस्तक का अध्ययन करते जो इंगलिस्तान के प्रकाशस्तम्भों पर लिखी गई है तथा उसके पश्चात एक अधि-व्यापक विधेयक सदन के सामने रखते तो अच्छा होता।

श्री के० के० बसु (डायमंड हार्बर) : पिछले वक्ता ने एक अधिक व्यापक विधेयक की आवश्यकता पर ज़ोर दिया है। माननीय मंत्री ने कहा है कि यह सूक्ष्म है जिस का पहला भाग आनुषंगिक है तथा दूसरे भाग से केन्द्रीय प्रकाशस्तम्भ मंत्रणा समिति सहमत है जिस में वाणिज्य के तथा नौ-परिवहन सम्बन्धी हितों के प्रतिनिधि हैं।

मेरे माननीय मित्र ने कहा है कि इस संगठन को आत्मनिर्भर बनाने के लिये और अधिक धन की आवश्यकता है। इस के लिये उन्हें अधिक राजस्व की आवश्यकता है। मैं ने वह पुस्तक नहीं पढ़ी है जिस की ओर मेरे माननीय मित्र ने संकेत किया है परन्तु उन लोगों की दशा से परिचित हूं जो इन प्रकाशस्तम्भों की देख भाल करते हैं। हमें यह नहीं पता वह संगठन जो धन व्यय करता है उस का कौन सा अंश इन लोगों के कल्याण के लिये व्यय किया जाता है। हमें यह भी नहीं पता है कि यह अतिरिक्त राजस्व किस प्रकार उपयोग में लाया जायगा। इस संगठन की उन्नति करने में, या उसके अतिरिक्त व्यय को पूरा करने में, जो कांडला बन्दरगाह के निर्माण में आवश्यक होगा। अच्छा होता यदि माननीय मंत्री ने अपने पुरःस्थापन के व्याख्यान में सदन को बताया होता कि उन लोगों के कल्याण के लिये इस का कौन सा अंश व्यय किया जायगा जो इन प्रकाशस्तम्भों की देखभाल करते हैं।

इस विधेयक का मुख्य उद्देश्य प्रकाश-शुल्क को दो आना से बढ़ा कर चार आना करना है। मुझे भय है कि तटवर्ती नौका-परिवहन जिस में प्रधान भाग हमारे राष्ट्रीय नौकापरिवहन करने वाले हितों का है उन पर इस का खराब प्रभाव होगा क्योंकि उन को अतिरिक्त धन देना पड़ेगा। इस लिये मैं समझता हूं तटवर्ती नौकापरिवहन करने वालों तथा समुद्र पार नौकापरिवहन करने वालों में भेद करना आवश्यक है क्योंकि उन में हमारे राष्ट्रीय हितों का भाग बहुत कम है। मैं आशा करता हूं कि सरकार इन सुझावों पर उचित रूप से ध्यान देगी।

सेठ अचल सिंह (आगरा जिला--पश्चिम) : यह जो सरकार ने भारतीय प्रकाशस्तम्भ (संशोधन) विधेयक पेश किया है, मैं उस का समर्थन करता हूं। इस बिल का पास होना बहुत ज़रूरी है। इस समय हमारे भारतवर्ष का समुद्री तिजारती बेड़ा बढ़ रहा है और जो नया पोर्ट कांडला का बना है, इस सब को देखते हुए अगर हमारे लाइट हाउसेज़ का प्रबन्ध ठीक नहीं होता है, तो इस से हमें काफी नुकसान पहुंच सकता है, इसलिये यह जो दो आने फ़ी टन अभी तक लिया जाता रहा है इस के बजाय यह जो चार आने लेने का प्रस्ताव आया है, उस का मैं स्वागत करता हूं, इस से लाइट हाउसेज़ के इम्प्रूवमेंट और डेवलपमेंट में काफ़ी मदद मिलेगी और जो टैक्स पेयर्स हैं उन को फ़ायदा होगा, दो आने से चार आने की बढ़ोतरी से लाइट हाउसेज़ की एफ़िशियेंसी भी बढ़ेगी, और जो धन बच जायगा वह रिज़र्व फ़ंड में रहेगा। इसलिय मैं इस बिल का स्वागत करता हूं और माननीय मंत्री जी को इस को पेश करने के लिए बधाई देता हूं।

श्री एस० सी० सामन्त (तामलुक): इस विधेयक का हृदय से समर्थन करता हूं।

प्रकाश शुल्क दो आने से बढ़ा कर चार आने किया जा रहा है । इस धनराशि का कुछ अंश कांडला बन्दरगाह पर व्यय किया जायगा । मैं माननीय मंत्री से जानना चाहूंगा कि क्या मंत्रणा परिषद ने जिस से उन्होंने परामर्श किया है--हिसाब लगाया है कि इन प्रकाशस्तम्भों का प्रबन्ध करने वाला संगठन हानि से तो नहीं चल रहा है जिस की पूर्ति करने के लिये यह शुल्क बढ़ाया जा रहा हो या यह बढ़ोतरी प्रकाशस्तम्भों तथा जल पर तैरने वाले चिन्हों के सुधार के लिये की जा रही है ।

इस सम्बन्ध में मैं कलकत्ता बन्दरगाह की ओर ध्यान दिलाऊंगा जिस में नौका-परिवहन अत्यन्त खतरनाक है । सरकार को चाहिये कि प्रबन्ध करे कि कलकत्ते से लेकर बंगाल की खाड़ी तक प्रकाशस्तम्भ तथा जल पर तैरने वाले चिन्हों की भली भांति देखभाल की जावे ।

एक और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या मंत्रणा परिषद को विश्वास है कि इस प्रकार शुल्क को दुगना करने से काम चल जायगा या उन्हें फिर बढ़ोतरी करना पड़ेगी । यदि ऐसा हो तो सरकार को चाहिये कि पूरा हिसाब लगा कर और भी व्यापक विधेयक रक्खे । इन शब्दों के साथ मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूं ।

श्री पुन्नूस : तटवर्ती नौकापरिवहन से सम्बन्ध रखने वाले कुछ व्यक्तियों से मेरी भेंट हुई तो उन्होंने शिकायत की कि नौकापरिवहन के अधिक व्यय होने के कारण बहुत सा माल जो साधारण तरह से नौका द्वारा जाता था अब रेल द्वारा जाने लगा है । उन्होंने यह भी बताया कि वे सरकार से बराबर आर्थिक सहायता की मांग करते रहे हैं । इस प्रसंग के होते हुए मेरे समझ में नहीं आया कि उन्हीं लोगों ने इस बढ़ोतरी से अपनी सहमति कैसे प्रकट की । मैं सरकार को ध्यान दिलाना चाहता हूं कि तटवर्ती नौकापरिवहन के सारे प्रश्न की जांच की जाय तथा उस के विकास तथा प्रोत्साहन के उपाय किये जायें ।

दूसरी बात यह है कि मैं खण्ड 'ख' राज्यों के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं कि माननीय मंत्री ने इन के सम्बन्ध में कुछ नहीं बताया है कि इन से परामर्श किया गया है या नहीं हालांकि इस के द्वारा होने वाली आय का सब से अधिक महत्व इन्हीं राज्यों के लिये है । ट्रावनकोर-कोचीन में एक बड़ा बन्दरगाह कोचिन में है जिस के सम्बन्ध में मैं ने शिकायत सुनी है कि इस की ओर उसी प्रकार ध्यान नहीं दिया जाता है जैसा अन्य बन्दरगाहों की ओर । यहां कार्य करने वाले कर्मचारियों को वही सहूलियतें, भत्ते, इत्यादि नहीं दिये जाते हैं जो अन्य बन्दरगाहों में मिलते हैं । मैं जानना चाहता हूं कि क्या इस बढ़ोतरी के सम्बन्ध में सरकार को इस प्रश्न पर भी विचार करने का अवसर मिलेगा और क्या उनकी सुविधाओं में सुधार किये जायेंगे ।

श्री वी० पी० नायर (चिरायिन्किल) : हम इस प्रकार के विधेयकों से बहुत सशंकित हैं जो खण्ड 'ख' राज्यों को संघ में सम्मिलित करते हैं । पता नहीं ट्रावनकोर-कोचिन पर इस विधेयक का क्या प्रभाव पड़ेगा । हालांकि कई बार कहा गया है कि राज्य के कर्मचारियों को केन्द्रीय सेवा में ले लेने पर बहुत से अनर्थ हुए हैं परन्तु सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया है । इस के कई उदाहरण दिये जा सकते हैं । राज्य सेना के भारतीय सेना में मिलाये जाने पर लाखों आदमियों को छंटनी कर के निकाल दिया गया । इसी प्रकार आयकर विभाग में हुआ । इसलिये ऐसे मामलों में जिस राज्य का सम्बन्ध हो उस

[श्री वी० पी० नायर]

की सरकार से अवश्य परामर्श करना चाहिये। कुछ भी हो माननीय मंत्री ने मेरे माननीय पुन्नूस का खण्डन नहीं किया। यदि सरकार ने इस विधेयक के सम्बन्ध राज्य सरकार से परामर्श नहीं किया है तो यह महान अनर्थ है और अभी यहीं रोकना चाहिये।

श्री अलगेशन : मैं आशा करता था कि इस छोटे से विधेयक में इतना समय नहीं लगेगा; फिर भी मैं माननीय मित्रों को उन के प्रकाश डालने वाले व्याख्यानों के लिये बधाई देता हूं।

एक माननीय मित्र ने कहा है कि यह विधयक एक अपयुक्त अधिनियम का संशोधन करता है। यह ठीक नहीं है। मूल अधिनियम अब भी प्रचलित है। अतः हमारा इरादा कोई और व्यापक विधेयक रखने का नहीं है।

यह विधेयक एक आकस्मिक आवश्यकता के कारण रखा गया है क्योंकि हम प्रकाशस्तम्भों के सम्बन्ध में उस कार्यक्रम को कार्यान्वित करना चाहते ह जो योजना आयोग ने पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में बनाया है। उस के लिये इस विभाग को ८० लाख रुपये का ऋण मिलेगा और जो इस बढ़ोतरी से मिलेगा उस को सब को मिला कर हम यह कार्यक्रम पूरा करना चाहते हैं।

मेरे माननीय मित्र ने तटवर्ती नौकापरिवहन का प्रश्न उठाया ह। परन्तु तटवर्ती नौकापरिवहन करने वालों को तो कुछ विशेष सुविधायें मिली हुई हैं क्योंकि उन को महीने में केवल एक बार शुल्क देना पड़ता है और वे भारत के किसी भी बन्दरगाह को कितनी ही बार यात्रा करने के लिये स्वतन्त्र हैं।

कलकत्ते के बन्दरगाह में जो प्रकाशस्तम्भ हैं उनका वर्गीकरण स्थानीय विषयों में किया जाता है तथा वे सीधे तरह से कलकत्ता बन्दरगाह के आयुक्तों के आधीन हैं। परन्तु प्रकाशस्तम्भ विभाग का मुख्य इंजीनियर भारत के प्रकाशस्तम्भों के मुख्य परिदर्शक भी होता है। वह समय समय पर निरीक्षण करता है, तथा जो दोष होते हैं उन की सूचना स्थानीय अधिकारियों को देता है और स्थानीय अधिकारी उन का सुधार करते रहते हैं

खण्ड 'ख' राज्यों से परामर्श करने के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है वह सब कल्पनात्मक है। मैं ने खण्डन इस लिये नहीं किया कि बीच में टोकने से विघ्न होगा मैं ने सोचा था कि अन्त में उत्तर देते समय कहूंगा। सौराष्ट्र, ट्रावनकोर-कोचीन जैसे नौकापरिवहन सम्बन्धी राज्यों से वित्तीय एकीकरण के समय विचार विमर्श किया जा चुका है। मैं आश्वासन देता हूं कि केन्द्र के पास आ जाने से प्रकाशस्तम्भों की दशा खराब नहीं होगी बल्कि उनका सुधार किया जायगा।

मैं एक बात और कहना चाहता हूं। वह यह कि हालांकि शुल्क की सीमा दो आना निर्धारित है फिर भी केवल डेढ़ आना लिया जाता है। इसी प्रकार केन्द्रीय प्रकाशस्तम्भ मंत्रणा समिति से परामर्श किया जायगा कि यह शुल्क बढ़ा कर तीन आना किया जाय या चार आना।

मैं आशा करता हूं कि मैं ने सब बातों का उत्तर दे दिया है और अब मैं अपने प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

सभापति महोदय : प्रश्न यह है :

"कि भारतीय प्रकाशस्तम्भ अधिनियम

१९२७ के संशोधन करने वाले विधेयक पर विचार किया जाये ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

खण्ड १ से ४ तक तथा शीर्षक तथा अधिनियमीकरण सूत्र विधेयक का अंग बना लिये गये ।

श्री अलगेशन : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि विधेयक पारित किया जाये ।"

सभापति महोदय : प्रश्न यह है :

"कि विधेयक पारित किया जाये" ।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

सभापति महोदय : क्या कुछ और भी कार्यवाही शेष है ।

संसद कार्य मंत्री (श्री सत्यनारायण सिन्हा) : और कोई कार्यवाही नहीं है ।

सभापति महोदय : चूंकि कोई कार्यवाही नहीं है इसलिये सदन की बैठक स्थगित होती है ।

तत्पश्चात सदन की बैठक सोमवार २७ अप्रैल १९५३ के सवा आठ बजे तक, के लिये स्थगित हो गई ।